प्रस्तावना ।



सुखविपाक, विपाकसूत्र का दूसरा स्कन्ध है। इस के दश अध्ययनो मे दश कुमारो की कथाओ द्वारा पुण्य का साक्षात् फल स्वर्गादि की प्राप्ति और परपरा फल मोक्ष की प्राप्ति, बताया गया है। इसकी पूर्णता ज्ञाता धर्मकथाङ्ग औपपातिक रायपसेनी भगवती आदि के पाठो से की गई है। इसलिये सुखविपाक सूत्र अब तक बहुत सक्षिप्त मिलता था। प्रायः सब प्रतियो मे किस जगह का कितना पाठ लेना चाहिए, ऐसी सूचना मात्र रहती थी। इससे पाठको को उतना लाभ न होता था जितना होना चाहिए। फलत. पाठको को इसके पूर्ण लाभ से वचित रहना पड़ता था। इस कमी की पूर्ति करने के लिये हमने एक प्राचीन प्रति के आधार से सस्कृत प्राकृत न जानने वाले पाठको के लाभ के लिये हिन्दी मे अनुवाद कराकर प्रकाशित करने का विचार किया था। हर्ष है, आज हमारा विचार सफल हुआ और आपके सामने इसे रखने का अवसर प्राप्त हुआ।

पाठको के सुभीते के लिये, जो पाठ जहा से लिये गये है, उनका टिप्पणी मे उल्लेख कर दिया है। टिप्पणी मे सूत्रो की पृष्ट पक्ति आगमोदय समिति के सूत्रो के अनुसार दी गई है।

अन्त मे निवेदन है, कि यदि अनुवाद आदि मे कोई त्रुटि रह गई हो, तो विज्ञ पाठक सुधार लेवें। और कृपया हमे सूचना देदेवें, ताकि अगली आवृत्ति मे उनका सुधार कर दिया जाय। इत्यलम्

निवेदक—

सेठिया जैन ग्रन्थालय
बीकानेर
28—7—26

भैरोंदान जेठमल सेठिया

। इति प्रथम अध्ययन ।



श्रीवीतरागाय नमः

सुख-विपाक-सूत्रम्

(हिन्दी-भावार्थसहितम्)

मूलम्— तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णगरे गुणसीले चेइए होत्था। वण्णओ— ॥ १ ॥

भावार्थ— इस अवसर्पिणी कालके चौथे आरे मे उस समय(जब कि भगवान् महावीर स्वामी, और वह राजा विद्यमान था) राजगृह नामका नगर था। उसमें गुणशील नामका चैत्यालय—व्यन्तरायतन था। उसका वर्णन आगे कहे अनुसार समझ लेना चाहिए ॥ १ ॥

मूलम्— * तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी अज्जसुहम्मे णामं थेरे जातिसंपन्ने कुलसंपन्ने बलरूवविणयणाणदंसणचरित्तलाघवसंपन्ने ओयंसी तेयंसी वच्चंसी जसंसी जियकोहे जियमाणे जियमाए जियलोहे जियइंदिए जियनिद्दे जियपरीसहे जीवियासमरण-भयविप्पमुक्के तवप्पहाणे गुणप्पहाणे एवं करणचरणणिग्गहणिच्छयअज्जवमद्दवलाघवखंतिगुत्तिमुत्तिविज्जामंतबंभवेयनयनियमसच्चसोयणाणदंसणचरित्तउराले घोरे घोरव्वए घोरतवस्सी घोरबंभचेरवासी उच्छूढसरीरे संखित्तविउलतेउलेस्से चउद्दसपुव्वी चउणाणोवगते, पंचहिं अणगारसए-

---

* ज्ञातासूत्र के सूत्र ४ से प्रारंभ

हिं सद्धिं संपरिवुडे,पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे, गामाणुगामं दूइज्जमाणे, सुहंसुहेण विहरमाणे जेणेव रायगिहे णगरे, जेणेव गुणसीले चेइए तेणामेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता अहापडिरूवं ओग्गहं ओगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति। ॥ २ ॥

भावार्थ—उस आरे के उस समय मे, श्रमण भगवान् महावीर के शिष्य आर्य सुधर्माचार्य, जो कि उत्तम जाति और उत्तम कुलवाले.बल रूप -शरीर की आकृति विनय ज्ञान दर्शन चारित्र और लाघव— अर्थात् थोड़ी उपाधि रखनेवाले और तीन गारवों के त्याग—सहित थे। उनका मन सदा उन्नत, शरीर तेजस्वी और वचन बड़ प्रभावशाली थे। वे यशस्वी, क्रोध मान माया लोभ को जीतने वाले, पाचों इन्द्रियो को वशमें करने वाले, तथा निद्रा और परीषह को जीतने वाले थे। उन्हें न जीते रहने की लालसा थी न मरण का डर। तप ही उनका साध्य या तपके द्वारा प्रधान, और सयमादि गुणों के द्वारा प्रधान थे। पिण्डशुद्धि आदि तथा मुनिधर्म (महाव्रत) के अनुष्ठान और विनय में तत्पर थे। आर्जव—निष्कपटता, मार्दव— निरभिमानता, लाघव, क्षमा, गुप्ति और मुक्ति— निर्लोभता—से युक्त थे। विद्या, मत्र और ब्रह्मचर्य से युक्त, वद—लौकिक और लोकोत्तर आगम, तथा नय आदि को जानने वाले, अभिग्रह आदि नियमों को पालने वाले, सत्य, शौच—द्रव्य से निर्लेप तथा भाव की अपेक्षा समाचारी—को पालन करने वाले,ज्ञान दर्शन चारित्र से प्रधान,राग द्वेष परिग्रह आदि को जीतने वाले, घोर व्रतो को पालने वाले, घोर तपस्या करने वाले, घोर ब्रह्मचर्य पालने वाले, शरीर की शुश्रूषा आदि न करने वाले, अपनी विस्तृत तेजोलेश्या को सक्षिप्त करने—काम में न लाने—वाले, चौदह पूर्वो के ज्ञाता, मति श्रुत अवधि और मन पर्याय ज्ञानों से युक्त, पाचसौ शिष्यों से घिरे हुए, एक दूसरे के आगे पीछे चलते हुए, आनन्द से क्रमश.

अनेक गावों में विहार करते हुए,उस राजगृह नगर के उसी गुणशील नामक चैत्यालय मे पधारे। पधार कर, मुनियों के योग्य स्थान पाकर सयम और तप से आत्म-भावना करते हुए सुख से विहार करने लगे ॥ २ ॥

मूलम्— तते णं रायगिहे नगरे परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ;परिसा जामेव दिसं पाउब्भूया, तामेव दिसं पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स जेट्ठे अंतेवासी अज्जजंबू णामं अणगारे कासवगोत्ते णं सत्तुस्सेहे, जाव अज्जसुहम्मस्स थेरस्स अदूरसामंते उड्ढंजाणू अहोसिरे झाणकोट्ठोवगते संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति। तते णं से अज्जजंबू णामं अणगारे जायसड्ढे जायसंसए जायकोउहल्ले संजातसड्ढे संजातसंसए संजातकोउहल्ले,उप्पन्नसड्ढे उप्पन्नसंसए उप्पन्नकोउहल्ले,समुप्पन्नसड्ढे समुप्पन्नसंसए समुप्पन्नकोउहल्ले उट्ठाए उट्ठेति ॥३॥

भावार्थ— इसके अनन्तर, राजगृह नगर से एक जनसमुदाय (परिषत्) सुधर्मास्वामी की वन्दना करने के लिए आया। सुधर्मास्वामी ने उसे धर्म का उपदेश दिया। वह समुदाय जिस दिशासे— जिस तरफ से आया था, उसी दिशा— उसी तरफ चला गया। उसी काल के उसी समय में आर्य सुधर्माचार्य मुनिराज के सब से बडे शिष्य, कश्यपगोत्रीय ७हाथके(यावत)आर्य जम्बूस्वामी नामक स्थविर,सुधर्माचार्य के न बहुत दूर ही बैठे थे न बहुत पास ही,अर्थात् थोडी सी दूर बैठे थे,तथा ऊपर को घुटना और नीचा शिर करके—गोदुहासन मे ध्यान रूपी कोठे मे प्राप्त थे और सयम तथा तप के द्वारा आत्मा का ध्यान करते हुए विचरते थे। इसके बाद स्थविर जम्बूस्वामी को पदार्थों के जानने की इच्छा हुई। क्योंकि उन्हें यह सन्देह हुआ कि भगवान् महावीरने जिस तरह दस अगों का उपदेश दिया है, उसी तरह ग्यारहवें अगका उपदेश दिया है, या और किसी प्रकार ? इस

बाद उन्हें संशय होने से उत्सुकता पैदा हुई। इस लिए वे (जम्बूस्वामी) वहां से उठ खड़े हुए ॥ ३ ॥

मूलम्— उट्ठाए उट्ठित्ता जेणामेव अज्जसुहम्मे थेरे तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अज्जसुहम्मे थेरे तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, करेत्ता वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता अज्जसुहम्मस्स थेरस्स नच्चासन्ने नाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे पंजलिउडे विणएणं पज्जुवासमाणे एवं वयासी— जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं तित्थगरेणं सयंसंबुद्धेणं पुरिसुत्तमेणं पुरिससीहेणं पुरिसवरपुंडरीएणं पुरिसवरगंधहत्थिएणं लोगुत्तमेणं लोगनाहेणं लोगहिएणं लोगपईवेणं लोगपज्जोयगरेणं अभयदएणं सरणदएणं चक्खुदएणं मग्गदएणं बोहिदएणं धम्मदएणं धम्मदेसएणं धम्मनायगेणं धम्मसारहिणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टिणं अप्पडिहयवरनाणदंसणधरेणं वियट्टछउमेणं जिणेणं जावएणं तिण्णेणं तारएणं बुद्धेणं बोहएणं मुत्तेणं मोयगेणं सव्वण्णूणं सव्वदंसिणं सिवमयलमरुयमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणरावत्तियं सासयं ठाणमुवगतेणं दुहविवागाणं अयमट्ठे पन्नत्ते, सुहविवागाणं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते?॥४॥

भावार्थ— उठ कर जहां सुधर्माचार्य स्थविर थे वहां गये। जा करके सुधर्माचार्य को दक्षिण दिशा से तीन बार प्रदक्षिणा (परिक्रमा)

१ जायसड्ढे उप्पन्नसड्ढे संजायसड्ढे का यद्यपि कोई भिन्न अर्थ नहीं है, किन्तु स्तुतिप्रधान करने के लिए इनका भिन्न - प्रयोग किया गया है। जैसे- जम्बू स्वामी को श्रद्धा उत्पन्न हुई, इस कारण वह श्रद्धा प्राप्त हुई। अथवा इन्हें जानने की इच्छा हुई क्योंकि संशय हुआ, संशय इस कारण हुआ कि इन्हें उत्सुकता हुई।

२ ज्ञाता का पाठ समाप्त।

की। प्रदक्षिणा करके स्तुति और नमस्कार किया। स्तुति और नमस्कार करके आर्य सुधर्माचार्य स्थविर से थोड़ी सी दूर पर, सेवा करते हुए और नमस्कार करते हुए साम्हने बैठे। सुनने की इच्छा करके और हाथ जोड़कर विनयपूर्वक इस प्रकार बोले—हे भगवन्! श्रुत-धर्म की आदि करने वाले अर्थात् आचार आदि सूत्रो के आदि उपदेशक, तीर्थङ्कर, अपने आप ही ज्ञान प्राप्त करने वाले, समस्त पुरुषों में रूपादि अतिशयो की अपेक्षा उत्तम, वीरता आदि गुणों से पुरुषों में सिंह के समान, पुरुषों में पाप आदि से रहित होने से पुण्डरीक— सफ़ेद कमल के समान, पुरुषों में गन्धहस्ती के समान, (जिस तरह गन्धहस्ती की गन्ध से सब हाथी भाग जाते हैं उसी तरह जहा भगवान् जाते, वहा से ईति भीति तथा मिथ्यामतवाओं के भाग जाने से भगवान् को गन्धहस्ती की उपमा दी जाती है) लोक मे सब से श्रेष्ठ, लोक के नाथ, लोक (छह जीव निकाय) का हित करने वाले, श्रद्धावान् पचेन्द्रिय जीवों को धर्म का उपदेश देने के कारण दीपक के समान, सूर्य के समान लोक मे ज्ञान का प्रकाश करने वाले, जीवों को अभयदान देने वाले, नाना आपत्तियों मे फँसे हुए जीवों को मोक्ष रूपी शरण देने वाले, श्रुतज्ञान रूपी चक्षुको देने वाले, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र रूप मोक्षमार्ग को देने वाले, सम्यक्त्व तथा चारित्र रूपी बोधि को देने वाले, सामायिक आदि चारित्र—धर्म को देने वाले, श्रुत- चारित्र रूपी धर्म का उपदेश देने वाले, धर्म के नेता, धर्म रथ का चलाने के लिए सारथी के समान, जैसे चक्रवर्ती चारो दिशाओं मे विजय पाता है उसी तरह, चारो गतियों पर विजय प्राप्त करने वाले, केवल-ज्ञान और दर्शन को धारण करने वाले, शठता रहित, राग द्वेष को जीतने वाले, छद्मस्थों को राग द्वेष जिताने वाले, स्वय तिरने वाले और दूसरों को तारने वाले तत्वज्ञान प्राप्त करने और कराने वाले, धनादि बाह्य परिग्रह और क्रोधादि अन्तरंग

परिग्रह को छोड़ने वाले, तथा दूसरों से छुड़ाने वाले, सर्वज्ञ और सर्वदर्शी, कल्याण स्वरूप अचल नीरोग अन्तरहित बाधा रहित जिससे फिर नहीं लौटते ऐसे नित्यस्थान (मोक्ष) को प्राप्त होने वाले, श्रमण भगवान् महावीरने दुःखविपाक का अर्थ कहा है, किन्तु हे पूज्य! उन श्रमणभगवान्ने मोक्ष को जाते हुए सुख विपाक का क्या अर्थ कहा है? ॥४॥

मूलम्—तते णं से सुहम्मे अणगारे जंबूअणगारं एवं वयासी—एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता । तं जहा—सुबाहु १ भद्दनंदी २ सुजायए ३ सुवासवे ४ तहेव जिणदासे ५ धणपती य ६ महब्बलो ७ भद्दनंदी ८ महचंदे ९ वरदत्ते १० ॥ ५ ॥

भावार्थ— जम्बू स्वामी का प्रश्न सुनकर सुधर्मास्वामी अनगार बोले—हे जम्बू ! [यावत्] मुक्ति को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीरने सुखविपाक के दश अध्ययन बताए हैं । वे इस प्रकार हैं— १ सुबाहु २ भद्रनन्दी ३ सुजात ४ सुवासव ५ जिनदास ६ धनपति ७ महाबल ८ भद्रनन्दी ९ महचन्द्र तथा १० वरदत्त ॥ ५ ॥

मूलम्— जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता , पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स सुहविवागाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते? ॥ ६ ॥

भावार्थ—[जम्बू स्वामी बोले]भगवन् !(यावत्)मुक्ति को प्राप्त हुए भगवान ने सुखविपाक के दश अध्ययन कहे हैं। किन्तु हे भगवन् ! उन मुक्ति को प्राप्त हुए भगवान ने उनमें से, पहिले अध्ययन में क्या बताया है? ॥ ६ ॥

मूलम्—तते णं से सुहम्मे अणगारे जंबूअणगारं एवं वयासी—एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं हत्थिसीसे

णामं णगरे होत्था। रिद्धत्थिमियसमिद्धे, पमुइयजणजाणवए, आइण्णजणमाणुस्से , हलसयसहस्ससंकिट्ठविकिट्ठलट्ठपण्णत्तसेउसीमे, कुक्कुडसंडेयगामपउरे, उच्छुजवसालिकलिए, गोमहिसगवेलगप्पभूते, आयारवंतचेइयजुवइविविधसंणिविट्ठबहुले, उक्कोडियगायगंठिभेदयभडतक्करखंडरक्खरहिए, खेमे, णिरुवद्दवे, सुभिक्खे,वीसत्थसुहावासे, अणेगकोडीकोडुंबियाइण्णणिव्वुयसुहे, णडणट्टगजल्लमल्लमुट्ठियवेलंबगकहगपवगलासगआइक्खगलंखमंखतूणइल्लतुंबवीणियअणेगतालायराणुचरिए , आरामुज्जाणअगडतलागदीहियवप्पिणिगुणोववेए नंदणवणप्पगासे उव्विद्धविउलगंभीरखातफलिहे , चक्कगयमुसुंढिओरोहसयग्घीजमलकवाडघणदुप्पवेसे, धणुकुडिलवंकपागारपरिक्खित्ते, कविसीसयवट्टरइयसंठियविरायमाणे, अट्टालयचरियदारगोपुरतोरणउण्णयसुविभत्तरायमग्गे , छेयायरियदढफलिहइंदकीले , विवणिवणिच्छेत्तसिप्पियाइण्णणिव्वुयसुहे, सिंघाडगतिगचउक्कचच्चरपणियावणविविहवत्थुपरिमंडिए, सुरम्मे, णरवइपविइण्णमहिवइपहे, अणेगवरतुरगमत्तकुंजररहपहकरसीयसंदमाणीआइण्णजाणजुग्गे विमउलणवणलिणिसोभियजले, पंडुरवरभवणसण्णिमहिए, उत्ताणणयणपेच्छणिज्जे, पासादीए, दरिसणिज्जे, अभिरूवे पडिरूवे। तस्स णं हत्थिसीसस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभागे एत्थ णं पुप्फकरंडे णामं उज्जाणे होत्था । सव्वोउयपुप्फफलसमिद्धे, रम्मे, नंदणवणप्पगासे पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे, पडिरूवे, तत्थ णं कयवणमालपियस्स जक्खस्स जक्खायतणे होत्था ॥ ७ ॥ (१ सूत्र० प्रारम्भ).

भावार्थ—(जम्बू स्वामी के पूछने पर) सुधर्माचार्य जम्बूस्वामीसे इस प्रकार कहने लगे हे जम्बू! इस अवसर्पिणी के चौथे आरे के उस समय में हस्तिशीर्ष नाम का नगर था। यह नगर, अनेक भवनों से सुशोभित, भय रहित तथा धन धान्यादि से भरपूर था। वहां के रहने वाले लोग सदा प्रसन्न रहते थे। यह जन-समूह से भरा था। किसानों ने लाखों हलों से अधिक सीमा वाली दूर तथा पास का- सब जगह की- जमीन को जोतकर बीज बोने योग्य बना लिया था। उस नगर में मोर और मुर्गों के पालने वालों के बहुत से टोले रहते थे। वहां ईख जौ चावल आदि अनाजों की कमी न थी। बहुतसी गाय भैंस और भेड़ें थीं। वहां सुन्दर २ चैत्यालय और वेश्याओंके मुहल्ले भी बहुत थे। किन्तु उस नगरमें लाच (घुस)लेने वालो उचक्को लुटेरो चोरों चुंगीवालों का और राजाका उपद्रव नहीं था। किसीका बुरा नहीं होता था। भिक्षुकोंको भिक्षा बड़ी सुगमता से मिलती थी। इसलिए वहां विश्वासपात्र और निर्भय लोगोंका शुभ निवास था। अनेक प्रकारके समान समृद्ध कुटुम्बियों और सन्तुष्ट लोगोंसे भरा था; इसलिए सुरम्य था। वहां नाटक करने वाले, नाच करनेवाले, राजाकी स्तुति करनेवाले (चारण) मल्ल, विदूषक, कथा कहने वाले, तैराक, भांड, ज्योतिषी, अथवा स्वप्न-शास्त्र आदि जाननेवाले, वांस पर खेलने वाले, चित्र दिखाकर भिक्षा मांगने वाले, तूण—एक प्रकार का बाजा— बजाने वाले, वीणा बजाने वाले तालीं बजाकर नाचने वाले— इत्यादि लोग रहते थे। फुलवाड़ी बाग बगीचे, कुआ, तालाब, बावड़ी और उपजाऊ खेतों से युक्त और नन्दन वन के समान शोभमान था। ऊंची चौड़ी और गहरी खाई थी, जो कि ऊपर चौड़ी और नीचे सकड़ी थी। चक्र, गदा मुसुण्डी अवरोध (बीच का कोट) तथा सैकड़ों आदमियों को नाश करने वाली ऊपर लगाई हुई महाशिलामय शतघ्नी (बेलन) तथा छिद्र रहित किवाड़ों के कारण उस में घुसना बड़ा कठिन था। टेढ़े

धनुष से भी ज्यादा टेढ़े परकोटे से घिरा हुआ था। अनेक सुन्दर २ कंगुरों से मनोहर था। ऊची अटारियों, परकोटा के भीतर के आठ हाथ के मार्ग, ऊंचे २ परकोटा के द्वारों गोपुरों तोरणों और चौड़ी चौड़ी सड़कों से युक्त था। चतुर शिल्पकारों द्वारा बनाए हुए आगल और इन्द्रकील (नगर द्वार का एक भाग) से युक्त था। बाजार और वणिकों के बहुत स्थान थे। कुंभार आदि से वहा के निवासियों को बड़ा आराम रहता था। तिरस्तों चौरस्तों चत्वरों (बहुत रास्तों का संगम स्थान) और नाना तरह के वर्तन आदि के बाजारों से शोभित था। अति रमणीय था। वहां का राजा इतना प्रभावशाली था कि उसने अन्य समस्त राजाओं के तेजको फीका करदिया था। अनेक अच्छे अच्छे घोड़ों, मस्त हाथियों, रथों, गुमटी वाली पालखियों, स्यन्दमान (पुरुष प्रमाण पालखी) गाड़ी आदि और युग्यों (एक प्रकार की सवारी) से युक्त था। उस नगर के जलाशय, नवीन कमल कमलिनियों से शोभित थे। वह नगर चन्द्रमा जैसे स्वच्छ उत्तम उत्तम महलों से युक्त था। वह इतना स्वच्छ था कि विना पलक मारे (एक टक) देखने को जी चाहता था। देखते ही चित्त प्रसन्न हो जाता और आखों को आराम मिलता था। बड़ा ही मनोज्ञ था। देखने वालों को उसका जुदा २ ही रूप मालूम होता था।

इसी हस्तिशीर्ष नामक नगर के बाहर ईशान कोण में पुष्पकरण्डक नाम का उद्यान था। वह सर्व ऋतुओं के फूल और फलों से सम्पन्न था। नन्दन वन की तरह रमणीय था। देखते ही चित्त को प्रसन्न कर देता और आखों को बड़ा आनन्द आता था। बड़ा ही मनोज्ञ था। देखने वालों को जुदा जुदा ही रूप दिखाई देता था। इसी उद्यान में कयवण-मालपिय (कृतवनमालप्रिय) नाम के एक यक्ष का यक्षायतन था ॥७॥

मूलम्— चिराइए, पुव्वपुरिसपण्णत्ते, पोराणे, सद्दि-

१ ख० पत्र ४ पृ० २ प० १ से प्रारम्भ।

ए, वित्तिए, णाए, सच्छत्ते, सज्झए, सघंटे, सपडागे, पडागाइपडागमंडिए, सलोमहत्थे, कयवेयड्डिए, लाउल्लोइयमहिए, गोसीससरसरत्तचंदणदद्दरदिण्णपंचंगुलितले, उवचियचंदणकलसे, चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभाए, आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावे, पंचवण्णसरससुरहिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिए, कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामे, सुगंधवरगंधगंधिए, गंधवट्टिभूए, णडणट्टगजल्लमल्लमुट्ठियवेलंबयपवगकहगलासगआइक्खगलंखमंखतूणइल्लतुंबविणियभुयगमागहपरिगए, बहुजणजाणवयस्स विस्सुयकित्तिए, बहुजणस्स आहुस्स आहुणिज्जे, पाहुणिज्जे, अच्चणिज्जे वंदणिज्जे, नमंसणिज्जे, पूयणिज्जे, सक्कारणिज्जे, सम्माणणिज्जे, कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं विणएणं पज्जुवासणिज्जे, दिव्वे सच्चे सच्चोवाए, सण्णिहियपाडिहेरे जागसहस्सभागपडिच्छए, बहुजणो अच्चेइ आगम्म पुण्णभद्दचेइयं कयवणमालपियस्स जक्खस्स जक्खायतणं ॥ ८ ॥

भावार्थ—वह यक्षायतन, प्राचीन कालीन पूर्व पुरुषों द्वारा सन्मानित, पुराना, प्रसिद्ध, आराधन करने वालों को जीविका देने वाला, न्याय का निर्णय करने वाला, घंटा सहित, ध्वजा और ध्वजा के ऊपर की ध्वजाओं से मंडित और रोम की पूंजणी से युक्त था। उसमें वेदी बनी हुई थी। गोबर से लीपा हुआ था। खडिया मिट्टी से पोता हुआ था वहां ताजे घिसे हुए मलयागिर और लाल चंदन से पांच अंगुलियों का हाथ (थापा) बनाया हुआ था। चैत्यालय के बाहर मांगलिक घट बने हुए थे। अच्छे २ तोरण हरएक द्वार पर बंधे हुए थे। वहां भूमि को और

ऊपरी भाग को छूती हुई, विपुल विस्तार वाली गोल और लम्बी २ मालाए थीं। पाचों रंगों के फूलों से युक्त था। महकती हुई अगर आदि की सुगंध से सुगंधित, तथा चीड और लोबान आदि उत्तमोत्तम गंध वाले द्रव्यों से युक्त था। बहुत सुगंध वाला होनेसे ऐसा मालूम होता था, जैसे गंध-द्रव्य की गोली हो। वहा नट,नाचने वाले, रस्से पर खेल करने वाले, मल्ल, मुष्टि युद्ध करने वाले, विदूषक, तैराक, कथक, रास को गाने वाले, शुभाशुभ को कहने वाले, ऊचे वास पर खेलने वाले, चित्र दिखा- कर भिक्षा मागने वाले, तूण और वीणा बजाने वाले भोजक और भाट आदि लोगों से युक्त था। बहुत नगर निवासियों में उसकी कीर्ति प्रसिद्ध थी। अनेक लोग मन्त्रोच्चारण करके वहा आहुति देते और आराधन करते थे। चन्दन गंध आदि से, स्तुति से, नमस्कार से, फूलों से और वस्त्रों से पूजनीय था। इष्टसिद्धि, अनिष्टके निवारण के लिए, देव तथा देव की प्रतिमा प्रधानरूप में सेवन करने योग्य है ऐसा समझ कर पूजनीय था। सत्य-आदेश करने से सत्य, और सत्य प्रभाव-महिमा वाला था। अधि ष्ठायक देवों ने उसकी महिमा बढा रक्खी थी। हजारों यज्ञों का भाग उसे प्राप्त होता था। उसमे बहुत लोग आकर पूजा करते थे। इस प्रकार का पुष्पकरण्डक चैत्य कृतवनमालप्रिय नाम के यक्ष का यक्षायतन था ॥८॥

मूलम्— से णं पुप्फकरंडे चेइए कयवणमालपियस्स जक्खस्स जक्खायतणे एक्केणं महया वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते,से णं वणसंडे किण्हे किण्होभासे नीले नीलोभासे हरिए हरिओभासे सीए सीओभासे णिद्धे णिद्धो भासे तिव्वे तिव्वोभासे किण्हे किण्हच्छाए नीले नीलच्छा- ए हरिए हरियच्छाए सीए सीयच्छाए णिद्धे णिद्धच्छाए तिव्वे तिव्वच्छाए घणकडिअकडिच्छाए रम्मे महामेहणिकुरंबभूए ॥९॥

भावार्थ— पुष्पकरण्ड उद्यान में, वह कृतवनमालप्रिय नामक यक्ष का यक्षायतन, एक बड़े वनखण्ड (अनेक जाति के वृक्षों के समूह को वनखण्ड कहते हैं) से चारों तरफ घिरा हुआ था। वह वनखण्ड कहीं काला और काली प्रभा वाला था, कहीं नीला और नीली प्रभावाला था, कहीं हरा और हरी प्रभा वाला था। किसी जगह शीतल और शीतल-प्रभ था। किसी स्थान पर स्निग्ध और स्निग्धप्रभ था। तीव्र-वर्ण और तीव्र प्रभा वाला था। किसी जगह वह कृष्ण होने से कृष्ण छाया वाला था। किसी जगह मोर के गले की तरह नीला होने से नील छाया वाला था। अन्यत्र तोते के पंख के समान हरा था, अतएव हरी छाया वाला था। कहीं शीत था, अत शीत छाया वाला था। कहीं स्निग्ध था, अतएव स्निग्ध छाया वाला था। कहीं तीव्र वर्ण था, अत तीव्र छाया वाला था। वह शाखा प्रशाखाओं सहित था, इसलिए वहा सदा छाया रहा करती थी। वह ऐसा मालूम होता था, जैसे बड़े २ बादलों का समूह हो ॥ ६ ॥

मूलम्— ते णं पायवा मूलमंतो कंदमंतो खंधमंतो तयामंतो सालमंतो पवालमंतो पत्तमंतो पुप्फमंतो फलमंतो बीयमंतो अणुपुव्वसुजायरुइलवट्टभावपरिणया एक्कखंधा अणेगसाला अणेगसाहप्पसाहविडिमा अणेगनरवामसुप्पसारिअगेज्झघणविउलवट्टखंधा अच्छिद्दपत्ता अविरलपत्ता अवाईणपत्ता अणईइपत्ता निद्धूयजरढपंडुपत्ता णवहरियभिसंतपत्तभारंधकारगंभीरदरिसणिज्जा उवणिग्गयणव-

१ वाचनान्तर में— पाईणपडीणाययसाला उदीणदाहिणवितिथिणा ओणयनय रणय विप्पहाइयओलंबपलंबलंबसाहप्पसाहविडिमा अवाईणपत्ता अणुईणपत्ता—इतना पाठ अधिक है।

अर्थ— उनकी शाखाएं पूर्व और पश्चिम म लम्बी उत्तर और दक्षिण दिशा मे चौड़ी थीं, अधोमुख होकर नीचे को झुकी हुई थीं। कोई झुकती जा रही थीं। फैली हुई थीं तथा नीचे की ओर खूब लम्बी चली गई थीं।

तरुणपत्तपल्लवकोमलउज्जलचलंतकिसलयसुकुमालपवाल-सोहियवरंकुरग्गसिहरा णिच्चं कुसुमिया णिच्चं माइया णिच्चं लवइया णिच्चं थवइया णिच्चं गुलइया णिच्चं गोच्छिया णिच्चं जमलिया णिच्चं जुयलिया णिच्चं विणमिया णिच्चं पणमिया णिच्चं कुसुमियमाइयलवइयथवइयगुलइयगोच्छियजमलियजुयलियविणमियपणमियसुविभत्तपिंडमंजरि-वडिंसयधरा, सुयबरहिणमयणसालकोइलकोहंगकभिंगारक-कोंडलकजीवंजीवकणंदीमुहकविलपिंगलक्खकारंडचक्कवाय-कलहंससारसअणेगसउणगणमिहुणविरइयसद्दुण्णइयमहुर-सरणाइए, सुरम्मे, संपंडियदरियभमरमहुकरिपहकरपरिलि-न्तमत्तछप्पयकुसुमासवलोलमहुरगुमगुमंतगुंजंतदेसभागे,अ-ब्भंतरपुप्फफले बाहिरपत्तोच्छण्णे पत्तेहि य पुप्फेहि य उच्छ-ण्णपडिवलिच्छण्णे साउफले निरोयए अकंटए णाणाविह-गुच्छगुम्ममंडवगरम्मसोहिए विचित्तसुहकेउभूए वावीपुक्ख-रिणीदीहियासु य सुनिवेसियरम्मजालहरए पिंडिमणीहारि-मसुगंधिसुहसुरभिमणहरं च महया गंधद्धणिं मुयंता णा-णाविह गुच्छगुम्ममंडवकवरकसुहसेउकेउबहुला अणेगरह-जाणजुग्गसिबियपविमोयणा सुरम्मा पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ॥ १० ॥

भावार्थ— उस वनखण्डके वृक्षोंमे उत्तम जड़ें कद तने छाल शाखाएं अंकुर पत्ते फूल फल और बीज थे। वे गोल गोल वृक्ष, क्रम से लगे हुए बड़े मनोहर मालूम होते थे। उनमें एक ही एक स्कन्ध और अनेक शाखाएं और प्रशाखाएं थीं। अनेक मनुष्यों के बाँह फैलाने पर भी उनका तना बाम (बाँहों) में नहीं आसकता था। उन वृक्षों के पत्तों मे छेद न थे, तथा वे खूब घने थे, नीचे झुके हुए थे, वे ईति रहित थे। उनमे पुराने

और पीले पत्ते नहा थे। नवीन और हरे हरे पत्तों के समुदाय के अन्धकार से गंभीर दीखते थे। निकले हुए चचल नवीन २ पत्तों से, नरम नरम और उज्वल किशलयों से तथा सुन्दर कोंपलों से उनके अकुर और अग्रभाग शोभायमान थे। हमेशा फूले रहते थे। हमेशा मौर ——मौर—— वाले रहते थे। सदा पत्तो वाले रहते थे। सदा झुमके वाले रहते थे। सदा गुल्म वाले रहते थे। सदा गुच्छे वाले रहते थे। सदा एक ही श्रेणी में रहते थे। सदा दो दो साथ रहते थे। सदा फल फूलों से नमे हुए रहते थे। कोंटे सदा नमते जा रहे थे। इसलिए वे वृक्ष सदा फूले रहते, मौर युक्त रहते, पल्लवित रहते, झुमके वाले रहते, गुच्छे वाले रहते, श्रेणीबद्ध रहते, दो दो साथ में रहते, फलों के भार से नमे रहते और कोंटे नमते जारहे थे। तथा अच्छी तरह उत्पन्न हुए गुच्छे और मञ्जरी रूपी शिखर को धारण करने वाले वृक्ष उस वनखण्ड में थे। उस वनखण्ड में तोता मैना मोर कोयल कोहंगक (कोभगक) भिंगार कोंडलक चकोर नन्दीमुख कपिल पिंगलाक्ष कारंड चकवाक (चकवा) कलहंस सारस आदि अनेक पक्षियों के जोड़ों के द्वारा मधुर शब्द और आलाप हुआ करता था। वह अतिशय रमणीय था। वहां मदोन्मत्त भ्रमर और भ्रमरियों के समूह के समूह इकट्ठे रहते थे। और दूसरी दूसरी जगहों से आने वाले फूलों के रस के लोभी भौंरे उस प्रदेश में 'गुन गुन' शब्द (गूंज) किया करते थे। उस वनखण्ड के वृक्षों के अन्दर फल फूल थे और बाहर पत्तों से ढके हुए रहते थे। वे वृक्ष पत्तों और फूलों से बिल्कुल ढके रहते थे। उनके फल बड़े मीठे नीरोग और कांटों से रहित थे। नाना प्रकार के गुच्छों (बेल आदि के) गुल्मों (मालती आदि-लताओं) और लता-मण्डपों से रमणीय थे। वहां (वनखण्ड में) जगह-जगह मांगलिक ध्वजाएं थीं। वहां बावड़ी (चौकोर) पुष्करिणी और दीर्घिकाओं पर झरोखे वाले मकान बने हुए थे। बहुत दूर तक फैलने वाली शुभ गन्ध को छोड़ने वाले अनेक वृक्ष थे। उनके अने-

क गुच्छ गुल्म और मंडप- गृह थे। उनके नीचे, थाले- क्यारिया और ऊपर ध्वजाए थीं। वहा अनेक रथ गाडी पालखी आदि सवारिया रक्खी जा सकती थीं। बड़े रमणीय थे। देखते ही चित्त प्रसन्न हो जाता था। दर्शनीय और मनोहर थे। देखने वालों को उनका जुदा जुदा सा ही रूप दीखता था ॥१०॥

मूलम्— तस्स णं वणसंडस्स बहुमज्झदेसभागे एत्थ णं महं एक्के असोगवरपायवे पण्णत्ते, कुसविकुसविसुद्धरुक्खमूले मूलमंते कंदमंते जाव पविमोयणे सुरम्मे पासादीए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे ॥ ११ ॥

भावार्थ— उस वनखण्ड के बीचोंबीच एक उत्तम अशोकवृक्ष था। उसके आसपास से दूब घास और अन्यान्य झाड़िया निकाल दी गई थीं। वह जड़ वाला था, कन्द [1](जड़ से ऊपर और तने से नीचे के भाग) वाला था, (यावत्) उसके नीचे रथ आदि रक्खे जा सकते थे। वह बडा रमणीय था। उसे देखते ही चित्त प्रसन्न हो जाता था। देखने से आखों को कुछ भी कष्ट नहीं होता था। अत्यन्त मनोहर था। देखने वालों को उसका रूप नया और जुदा जुदा ही दिखाई देता था ॥११॥

---

१ वाचनान्तर— दूरोवगयकन्दमूलवट्टलट्ठसंठियसिलिट्ठघणमसिणणिद्धसुजायनिरुवहउव्विद्धपवरखंधी, अणेगनरपवरभुयागेज्झो, कुसुमभरसमोनमन्तपत्तलविसालसालो, महुकरिभमरगणगुमगुमाइयनिलितउड्डितसस्सिरीए, णाणासउणगणमिहुणसुमहुरकण्णसुहपलत्तसद्दमहुरे ॥

अर्थ— उस अशोकवृक्ष की जड़ें धरती में घुसी थीं। उसका तना गोल मनोज्ञ सुन्दर आकार वाला सीधा मोटा नरम चिकना विकार रहित, खूब ऊचा और उत्तम था। अनेक मनुष्यों की लम्बी लम्बी बाहों में भी नहीं आता था। उसकी डालिया फूलों के बोझ से झुकी हुई, पत्ते वाली और बडी थीं। उस पर भ्रमरी और भ्रमर 'गुनगुन' शब्द करते हुए बैठे थे और कोई २ उड रहे थे, इससे उसकी शोभा बढ़ गई थी। इनके सिवाय नाना तरह के पक्षियों के जोडो की कानों को आनन्द देने वाली मधुर कलकलाहट से वह और भी मनोज्ञ जान पड़ता था।

मूलम्—से णं असोगवरपायवे अण्णेहिं बहूहिं तिलएहिं लउएहिं छत्तोवेहिं सिरीसेहिं सत्तवण्णेहिं दहिवण्णेहिं लोद्धेहिं धवेहिं चंदणेहिं अज्जुणेहिं णीवेहिं कुडएहिं सव्वेहिं फणसेहिं दाडिमेहिं सालेहिं तालेहिं तमालेहिं पियएहिं पियंगूहिं पुरोवगेहिं रायरुक्खेहिं णंदिरुक्खेहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, ते णं तिलया लवइया जाव णंदिरुक्खा कुसविकुसविसुद्धरुक्खमूला मूलमंतो कंदमंतो एएसिं वण्णओ भणियव्वो, जाव सिवियपविमोयणा सुरम्मा पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा, ते णं तिलया जाव णंदिरुक्खा अण्णाहिं बहूहिं पउमलयाहिं णागलयाहिं असोयलयाहिं चंपगलयाहिं चूयलयाहिं वणलयाहिं वासंतियलयाहिं अइमुत्तयलयाहिं कुंदलयाहिं सामलयाहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता, ताओ णं पउमलयाओ णिच्चं कुसुमियाओ जाव वडिंसयधराओ पासादीयाओ दरिसणिज्जाओ अभिरूवाओ पडिरूवाओ ॥ १२ ॥

भावार्थ—वह अशोक वृक्ष बहुत से तिलक लीची-बड़हर शिरीष सप्तपर्ण (सात सात पत्तों के गुच्छे वाला वृक्ष) दधिपर्ण लोध्र धव चन्दन अर्जुन कदम्ब कुटज (कूडा) सव्य पनस दाडिम शाल ताड़ श्यामतमाल प्रियक फलफेन पुरोपग खिरनी (रायण) और नन्दि वृक्षों से, सब तरफ से सब जगह घिरा हुआ था। उन तिलक बड़हर आदि से लेकर नंदि वृक्ष पर्यन्त सब वृक्षों की जड़ें भी घास तथा अन्यान्य झाड़ियों से रहित थीं। उनकी जड़ें धरती में तिर्छी चली गई थीं। वे वृक्ष उत्तम कन्द वाले थे।

---

[१] वाचनान्तर में इतना पाठ अधिक है—तस्स णं असोगवरपायवस्स उवरिं बहवे अट्ठअट्ठमंगलगा पन्नत्ता।

अर्थ— उस अशोक वृक्ष के ऊपर बहुत से आठ आठ श्रीवत्स आदि मांगलिक थे।

इसके सिवाय पहले वर्णन की हुई सब बातें उन वृक्षों में समझना चाहिए। (यावत्) वहां भी पालखी वगैरह वस्तुएं रक्खी जा सकती थीं (क्योंकि वे वृक्ष भी बहुत लम्बे चौड़े थे)। वे बहुत ही रमणीय थे। चित्त को प्रसन्न करने वाले थे। दर्शनीय थे। मनोहर थे। देखने वालों को उन के जुदे जुदे ही रूप दिखाई देते थे। तथा वे (तिलक आदि वृक्ष) अनेक पद्मलताओं से नागलताओं से अशोक लताओं से चंपक लताओं से आम्र लताओं से वन लताओं से वासती लताओं से अतिमुक्तक लताओं से कुंद लताओं से और श्याम लताओं से चारों तरफ घिरे हुए थे। वे लताएं सदा फूली रहती थीं। शिखर को धारण करने वाली और चित्तको प्रसन्न करने वाली थीं। हर्ष को पैदा करतीं और मनोहर थीं। दर्शकों को उनका रूप अलग २ ही दीखता था॥ १२ ॥

मूलम्— तस्स णं असोगवरपायवस्स हेट्ठा ईसिं खंधसमल्लीणे एत्थ णं महं एक्के पुढविसिलापट्टए पण्णत्ते, विक्खंभायामउस्सेहसुप्पमाणे किण्हे अंजणघणकिवाणकुवलयहलधरकोसेज्जागासकेसकज्जलंगीखंजणसिंगभेदरिट्ठयजम्बूफलअसणकसणबंधणणीलुप्पलपत्तनिकरअयसिकुसुमप्पगासे मरकतमसारकलित्तणयणकीयरासिवण्णे णिद्धघणे अट्ठसिरे आयंसयतलोवमे सुरम्मे ईहामियउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिण्णररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्ते आइणगरूयबूरणवणीततूलफरिसे सीहासणसंठिए पासादीए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे। तत्थ णं हत्थिसीसे णगरे अदीणसत्तू नामं राया होत्था॥१३॥

भावार्थ— उस उत्तम अशोक वृक्ष के नीचे, तने के पास एक बड़ी पत्थर की शिला थी। वह उचित प्रमाण में चौड़ी लम्बी और ऊंची थी। उसका प्रकाश अंजनक (वनस्पति विशेष) मेघ, तलवार, नीले कमल,

वलदेव के वस्त्र, आसमान, शिर के बाल, काजल की कोठरी, खंजन (पहिए का कीट) सींग, अरिष्ट (रत्न विशेष) जामुन के फल, बीजक वृक्ष, सन के फल, नील कमल के पत्तों के समूह और अलसी के फल के समान नीला, तथा उसका वर्ण इन्द्रनील मणि, कसौटी, चमड़े के कमरपट्टे और आंखों की पुतली के समान काला था। वह बहुत चिकनी, आठ कोने वाली और दर्पण के समान चमकीली थी। बड़ी रमणीय थी। उस पर भेड़िया बैल घोड़ा मनुष्य मगर पक्षी सर्प किन्नर मृग अष्टापद चमरीगाय हाथी वनलता और पद्मलता आदि के चित्र बने हुए थे। उसका स्पर्श कमाये हुए चमड़े की तरह, रुई की तरह, बूर नामक वनस्पति की तरह, मक्खन की तरह और आक की रुई की तरह कोमल था। सिंहासन सरीखा आकार था। बड़ी सुन्दर, दर्शनीय, और मनोहर— इतनी मनोहर कि देखने वालों को जुदे जुदे रूप वाली दीखती थी।

उस हस्तिशीर्ष नामक नगर में अदीनशत्रु नामका राजा था॥ १३॥

मूलम्—महया हिमवंतमहंतमलयमंदरमहिंदसारे अच्चंतविसुद्धदीहरायकुलवंससुप्पसूए णिरंतरं रायलक्खणविराइअंगमंगे बहुजणबहुमाणे पूजिए सव्वगुणसमिद्धे खत्तिए मुइए मुद्धाहिसित्ते माउपिउसुजाए दयपत्ते सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे मणुस्सिंदे जणवयपिया जणवयपाले जणवयपुरोहिए सेउकरे केउकरे णरपवरे पुरिसवरे पुरिससीहे पुरिसवग्घे पुरिसासीविसे पुरिसपुंडरीए पुरिसवरगंधहत्थी अड्ढे दित्ते वित्ते विच्छिण्णविउलभवणसयणासणजाणवाहणाइण्णे बहुधणबहुजायरूवरयते आओगपओगसंपउत्ते विच्छड्डिअपउरभत्तपाणे बहुदासीदासगोमहिसगवेलगप्पभूते पडिपुण्णजंतकोसकोट्ठागाराउधागारे बलवं दुब्बलपच्चामित्ते ओहयकंटयं निहयकंटयं मलियकंटयं उद्धियकंटयं अकंटयं ओह-

यमंत्तु निहयसत्तुं मलियसत्तुं उद्धिअसत्तुं निज्जियसत्तुं पराइअसत्तुं ववगयदुब्भिक्खं मारिभयविप्पमुक्कं खेमं सिवं सुभिक्खं पसंतडिंबडमरं रज्जं पसासेमाणे विहरइ ॥ १४ ॥

भावार्थ— वह राजा महाहिमवान पर्वत की तरह, तथा मलय, मेरु और महेन्द्र पर्वतकी तरह प्रधान था। सर्वथा निर्दोष और प्राचीन राज—वंश मे पैदा हुआ था। उसका शरीर साथिया आदि राजलक्षणों से सर्वत्र शोभित था। अनेक जनसमूहो से सन्माननीय और पूज्य था। सर्व गुण सम्पन्न था। क्षत्रिय था। सदा खुश रहता था और निर्दोष माता से उत्पन्न हुआ था। उसके बाप दादाओ ने उस का राज्य अभिषेक किया था। माता पिताकी विनय करने वाला (सत्पुत्र) था। दयालु था। सीमा (कानून आदि की मर्यादा) बनाने वाला, और अपने बनाए हुए नियमों को स्वय पालने वाला था। क्षेम (निरुपद्रवता) करने वाला और स्वय क्षेम रूप था। मनुष्यो का स्वामी था। प्रजा को पिता समान था, क्योंकि उसकी रक्षा करता था। प्रजा को पुरोहित सरीखा था, क्योकि शान्ति करने वाला था। सन्मार्ग को बताने वाला था। अद्भुत कार्य करने वाला था। श्रेष्ठ मनुष्यों वाला था और वह स्वय मनुष्यों मे उत्तम था। अपराधियों को दण्ड देने मे क्रूर होने से वह पुरुषो मे सिंह के समान था। शत्रुओं को भयकारी होने से पुरुषों मे व्याघ्र के समान था। पुरुषो मे पुंडरीक (सफेद कमल) के समान था। क्योंकि सुख चाहने वालो के द्वारा सेवनीय था पुरुषो मे गन्धहस्ती के समान था। क्योकि शत्रु राजा रूपी हाथी उसका साम्हना नहीं कर सकते थे। सब तरह से सम्पन्न था। आत्म-गौरव वाला था। विनय आदि गुणों मे प्रसिद्ध था। उसके भवन, शयन (सेज) आसन यान वाहन आदि बहुत थे। अथवा उसके विशाल भवन, शयन आसन यान(रथ आदि) वाहन (घोडा आदि) से भरे रहते थे। उसके सोना चांदी भूमि आदि सम्पत्ति बहुत थी। वह आमदनी के उपा-

यों में सदा लगा रहता था। उसने बहुत आदमियों को भोजन आदि का इतना दान दिया था कि उनसे खाया न जाता था। उसके दास दासी गाय बैल भेड भैंसादि बहुत थे। बहुत से खजाने कोठार और आयुधशालाएँ थीं। पर्याप्त सेना थी। उसके शत्रु निर्बल थे। उसने अपने कण्टकों (विरोध करने वाले गोत्रजों) का विनाश कर दिया था। कण्टकों की सम्पत्ति छीन ली थी। कण्टकों को देश निकाला देदिया था। अतः वह कण्टकों से रहित था। तथा शत्रुओं का भी नाश कर दिया था। उनकी सम्पत्ति लूटली थी। गर्व मिटा दिया था। उन्हें देश निकाला दे दिया था। उन्हें सौन्दर्य आदि गुणों से जीत लिया था। शत्रुओं को निःसत्त्व कर दिया था।

वहां (नगर में) दुष्काल कभी न पडता था। महामारी आदिका भय न था। सब तरह कुशल था। उपद्रव नहीं थे। सदा सुभिक्ष (सुकाल) रहता था। राजाने राजकुमार आदि द्वारा होने वाले उपद्रवों को शान्त कर दिया था। वह राजा इस प्रकार राज्य का शासन करता था॥ १४॥

मूलम्— तस्स णं अदीणसत्तुस्स रण्णो धारिणीपामोक्खं देवीसहस्सं ओरोहे यावि होत्था।

तस्स णं अदीणसत्तुस्स रण्णो धारिणी णामं देवी सुकुमालपाणिपाया अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरा लक्खणवंजणगुणोववेया माणुम्माणप्पमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगी ससिसोमाकारकंतपियदंसणा सुरूवा करयलपरिमियपसत्थतिवलियवलियमज्झा कुंडलुल्लिहियगंडलेहा कोमुइयरयणिकरविमलपडिपुण्णसोमवयणा सिंगारागारचारुवेसा संगयगयहसियभणियविहियविलाससललियसंलावणिउणजुत्तोवयारकुसला पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा

१ उववाई के सूत्र ७ से प्रारम्भ।

पडिरूवा, अदीणसत्तुएणं रण्णा सद्धिं अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठे सद्दफरिसरसरूवगंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुभवमाणी विहरति ॥ १५ ॥

भावार्थ— उस अदीनशत्रु नामक राजा के अन्तःपुर (रनवास) म धारिणी आदि एक हजार स्त्रिया थीं। उनमे धारिणी पटरानी थी।

अदीनशत्रु राजा की धारिणी नामकी पटरानी के हाथ पैर बडे ही कोमल थे। उसका शरीर सब लक्षणों से सहित और परिपूर्ण पाचों इन्द्रियो से युक्त था। साथिया चक्र आदि लक्षण और तिल आदि व्यञ्जनों से युक्त था। मान (एक पुरुष प्रमाण जल का कुड भरे, उसमे उसी पुरुष को बैठानेसे यदि एक द्रोण प्रमाण (३२ सेर) पानी कुडसे बाहर निकल जाय, उसे मान प्राप्त कहते है) उन्मान (मनुष्य को तराजू पर बैठानेसे जो आधा भार— परिमाण विशेष— होता हो उसे उन्मान प्राप्त कहते है) प्रमाण (अपने अगुलों से जो १०८ अगुल हो, वह प्रमाण प्राप्त कहलाता है) के अनुसार ही उसके सब अग बने थे। इस लिए वह सुन्दरी थी। चन्द्रमा जैसा सौम्य और मनोहर अग होने से, देखने वालों को उसका रूप बड़ा ही प्यारा लगता था। मतलब यह है कि वह बहुत सुन्दरी थी। उसकी बीच मे रही हुई शुभ त्रिवलियुक्त कमर मुट्ठी मे आजाती थी। उसके गालों पर की गई पत्र रचना (वेल बूटा) कानों के कुण्डलों से चमकदार होगई थी। उसका मुख कार्तिक मे उदय होने वाले स्वच्छ चन्द्रमाकी चन्द्रिका सरीखा था। उसका वेष सिगार-रसका स्थान सा होगया था। या उसका आकार सिगार से सहित और वेष सुन्दर था। उसका चलना, हँसना, चेष्टा और कटाक्ष उचित था। प्रसन्नता पूर्वक परस्पर भाषण करने मे कुशल, तथा लोकव्यवहार मे चतुर थी। देखने वालों का चित्त देखते ही प्रसन्न होजाता था। वह दर्शनीय थी। मनोहर थी। देखने वालों को उसका नवीन नवीन रूप मालूम होता था। अदीनशत्रु राजा

मे अनुरक्त थी– विरक्त न थी। उसको शब्द रूप रस गन्ध और स्पर्श प्रिय था। वह मनुष्यो के पाच प्रकार के काम- भोगो को भोगती हुई रहती थी ॥ १४ ॥

मूलम्—* तते णं सा धारिणी देवी अण्णया कयाइ तंसि तारिसगंसि वासघरंसि अब्भिंतरलो सचित्तकम्मे बाहिरओ दूमियघट्टमट्ठे विचित्तउल्लोगचिल्लियतले मणिरयणपणा- सियंधकारे बहुसमसुविभत्तदेसभाए पंचवन्नसरससुरहिमु- क्कपुप्फपुंजोवयारकलिए कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूव- मघमघंतगंधुद्धुयाभिरामे सुगंधवरगंधिए गंधवट्टिभूए तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगणवट्टिए उभओ बिब्बोयणे गंडबिब्बोयणे दुहओ उन्नए मज्झेणयगंभीरे गंगापुलिणवा- लुयउद्दालसालिसए उवचियखोमियदुगुल्लपट्टपडिच्छन्ने सु- विरइयरयत्ताणे रत्तंसुयसंवुए सुरम्मे आइणगरूयबूरणव- णीयतूलफासे सुगंधवरकुसुमचुन्नसयणोवयारकलिए अद्धर- त्तकालसमयंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी अयमेयारूवं उरालं कल्लाणं सिवं धन्नं मंगल्लं सस्सिरीयं महासुविणं पासित्ता णं पडिबुद्धा ॥ १५ ॥

भावार्थ— इसके अनन्तर किसी समय वह धारिणी महारानी पुण्यात्माओं के रहने योग्य घर मे, (जिस मे एक शय्या थी) वह घर भीतर चित्रो से युक्त और बाहर घिस २ करके सुन्दर किया गया था। उसके ऊपर का भाग विचित्र विचित्र चित्रो से युक्त और नीचे का भाग देदीप्य- मान था। मणियो और रत्नों से वहा का अन्धकार नष्ट होगया था। वह एकदम समतल (ऊचा नीचा नहीं) था। पाचो रंगों के सरस सुगन्धित फूलो से सजा हुआ था। अगर चीड लोबान इत्यादि उत्तम उत्तम सुगन्ध-

*भगवती श० ११ उ० ११– पत्र ५०१ ५० २ ५१६ (आगमोदय स०) मे प्रारम्भ।

वाले द्रव्यों से बनी हुई धूप की लहलहाती हुई सुगन्ध से रमणीय था। अच्छी और उत्तम गंध से सुगंधित था। सुगन्ध की अधिकता होने से वह गन्ध की गुटिका (गोली) सा मालूम होता था। उस पुण्यात्माओं के रहने योग्य घर में (एक शय्या थी) वह शय्या शरीर के बराबर तकिया से युक्त थी। शिर गाल और पैरों के नीचे भी तकिया लगा हुआ था। वह शय्या दोनों तरफ ऊंची और बीच में नीची थी। जैसे गंगा नदी के तट की रेत पर चलने से पैर नीचे चला जाता है, इसी तरह शय्या पर पैर रखने से पैर नीचे धँस जाता था, क्योंकि वह बहुत कोमल थी। कसीदा किए हुए सूती और अलसीमय वस्त्रों का चादर बिछा हुआ था। धूल आदि से रक्षा करने के लिए एक वस्त्र था, वह अन्य समय शय्या पर ढका रहता था। वह मच्छरदानी से ढकी थी। अतिशय रमणीय थी। उसका स्पर्श चर्म के वस्त्र(साभरी जैसे) रुई, बूर (वनस्पति विशेष) मक्खन और आक की रुई सरीखा था। सुगंधि-युक्त उत्तमोत्तम फूलोंसे चूर्णों से तथा शय्या को शोभित करने वाली अन्य उत्तम वस्तुओं से युक्त थी। उस सेज पर आधी रात के समय— जब कि रानी न तो गाढ निद्रा में थी और न जाग ही रही थी— बडा कल्याणकारी, उपद्रव रहित, सौभाग्य करने वाला, मंगलमय और मश्रीक (सुन्दर) एक महास्वप्न देखकर जागी।१६।

मूलम्— हाररययखीरसागरससंककिरणदगरययमहासेल-पंडुरतरोरुरमणिज्जपेच्छणिज्जं थिरलट्ठपउट्ठवट्टपीवरसुसिलिट्ठविसिट्ठतिक्खदाढाविडंबियमुहं परिकम्मियजच्चकमलकोमलमाइयसोभंतलट्ठउट्ठं रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमालतालुजीहं

१वाचनान्तर में अधिक पाठ-रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमालतालुनिल्लालियग्गजीहं, महुगुलियाभिसंतपिंगलच्छं।

अर्थ— लाल कमल के पत्ते के समान अत्यन्त कोमल जीभ को निकाला है जिसने ऐसे, और मधु की गोली के समान आंखों वाले।

मृसागयपवरकणगनाविय आवत्तायंतवट्टतडियविमलसरसन-यणं विसालपीवरोरुं पडिपुन्नविउलखंधं मिउविसयसुहुमलक्खणपसत्थविच्छिन्नकेसरसडोवसोभियं ऊसियसुनिम्मियसुजायअप्फोडियलंगूलं सोमं सोमाकारं लीलायंतं जंभायंतं नहयलाओ ओवयमाणं नियगवयणमतिवयंतं सीहं सुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धा ॥ १७ ॥

भावार्थ— रानी ने स्वप्न में हार, चांदी, क्षीर समुद्र, चन्द्रमा की किरण, रजतमहाशैल (वैताढ्य पर्वत) और पानी की बूंद की तरह बहुत सफेद, लम्बे चौडे, रमणीय, अत दर्शनीय, स्थिर और मनोहर कलाई वाले, तथा गोल स्थूल मिली हुई उत्तम और तेज डाढों युक्त मुखवाले संस्कार किये गये उत्तम जाति के कमल के समान कोमल, यथाप्रमाण और अत्यन्त मनोज्ञ होठों वाले, लाल कमल की तरह कोमल तालु और जिह्वा वाले, मूस में रक्खे हुए और घूमते हुए तपाए हुए उत्तम सोने और बिजली जैसी निर्मल, बराबर और गोल गोल आखो वाले, मोटी और मजबूत जांघ वाले, पूर्ण और मोटे कंधे वाले, कोमल स्वच्छ सूक्ष्म और फैले हुए सुन्दर गर्दन के बालों (केसर) की छटा से शोभित, धरती पर फटकार कर ऊपर कर के फिर नीचे को झुकी है पूंछ जिसकी ऐसे, तथा सौम्य, सौम्याकार, क्रीडा करते हुए, जमाई लेते हुए सिंह को आकाश से उतरकर अपने मुंह मे घुसते हुए देखा ॥ १७ ॥

मूलम्—तए णं सा धारिणी देवी अयमेयारूवं उरालं जाव सस्सिरीयं महासुमिणं पासित्ता णं पडिबुद्धा समाणी हट्टतुट्ठजावहियया धाराहयकलंबपुप्फगंपि व समूससियरोम-कूवा तं सुविणं ओगिण्हति , ओगिण्हित्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ, सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेत्ता अतुरियमचवलमसंभंताए

अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए जेणेव अदीणसत्तुस्स रन्नो सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ ॥ १८ ॥

भावार्थ— इसके पश्चात् वह धारिणी नामकी महारानी इस प्रकार के उदार (यावत्) सश्रीक महान् स्वप्न को देखकर (जागी और) जागकर उसका हृदय हर्षित-सन्तुष्ट हो गया। मेघ की धारा से जैसे कदंब वृक्ष का फूल खिल जाता है, उसी तरह रोमाञ्चित होती हुई महारानी ने स्वप्न का अवग्रह किया। अवग्रह करके शय्या से उठी। शय्या से उठकर चपलता रहित शरीर और स्थिर मन होकर, राजहंस की तरह मन्द मन्द गमन करती हुई, जहां राजा अदीनशत्रु की सेज थी, वहीं पहुँची ॥१८॥

मूलम्— **तेणेव उवागच्छित्ता अदीणसत्तुं रायं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं उरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं सस्सिरीयाहिं मियमहुर-मंजुलाहिं गिराहिं संलवमाणी संलवमाणी पडिबोहेति। पडिबोहेत्ता अदीणसत्तुणा रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी नाना-मणिरयणभत्तिचित्तंसि भद्दासणंसि णिसीयति। णिसीइत्ता आसत्था वीसत्था सुहासणवरगया अदीणसत्तुं रायं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव संलवमाणी संलवमाणी एवं वयासी— ॥ १९ ॥**

भावार्थ— वहां पहुंचकर अदीनशत्रु राजाको इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ, अभिराम, उदार, कल्याणकारी, शिवकारी, धन्य, मंगलकारी, सश्रीक, मृदु, मधुर और मंजुल वचनों से बोलकर जगाया। जगाकर राजा अदीन शत्रु के आज्ञा देने पर अनेक मणि और रत्नों से विचित्र उत्तम आसन पर बैठ गई। बैठकर चलने के श्रम और क्षोभ को मिटा कर सुख कर आसन पर बैठी हुई, अदीनशत्रु राजा को इष्ट और मनोहर वचन बोलती हुई, इस प्रकार कहने लगी— ॥ १९ ॥

मूलम्--एवं खलु अहं देवाणुप्पिया! अज्ज तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगणवट्टिए तं चेव जाव नियगवयणमइवयंतं न सीहं सुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धा। तएणं देवाणुप्पिया! एयस्स उरालस्स जाव महासुविणस्स के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ?॥ २०॥

भावार्थ—हे देवानुप्रिय! आज मैं उस प्रकार की सेज पर—जिसमें कि शरीर की बराबर तकिया लगा हुआ था और पूर्वोक्त विशेषणों से युक्त थी—अपने मुंह में घुसते हुए सिंह को सपने में देखकर जागी हूं। हे देवानुप्रिय! इस तरह के उस उदार महास्वप्न का मुझे क्या विशेष फल होगा?॥ २०॥

मूलम्—तए णं से अदीणसत्तू राया धारिणीए देवीए अंतियं एयमट्ठं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए धाराहयनीवसुरभिकुसुमचंचुमालइयतणुयऊससियरोमकूवे तं सुविणं ओगिण्हइ। ओगिण्हित्ता ईहं पविसइ, ईहं पविसित्ता अप्पणो साभाविएणं मइपुव्वएणं बुद्धिविन्नाणेणं तस्स सुविणस्स अत्थोग्गहणं करेइ। तस्स सुविणस्स अत्थोग्गहणं करित्ता धारिणिं देवि ताहि इट्ठाहिं कंताहि जाव मंगल्लाहिं मिउमहुरसस्सिरीयाहि गिराहि संलवमाणे संलवमाणे एवं वयासी—॥ २१॥

भावार्थ—उस समय धारिणी रानी के मुख से इस विषय को सुनकर और हृदय में धारण करके राजा अदीनशत्रु का चित्त (यावत्) हर्षित और सन्तुष्ट हुआ। जैसे मेघ (जल)की धारके गिरने से सुगन्धित कदम्ब वृक्ष खिल जाता है, उसी तरह राजा का शरीर पुलकित होगया और रोंगटे खड़े होगये। इस प्रकार राजा को स्वप्न का अवग्रह हुआ, अवग्रह ज्ञान होने पर ईहा-ज्ञान की प्रवृत्ति हुई। ईहा की प्रवृत्ति होकर मतिज्ञान से

उत्पन्न हुई स्वाभाविक प्रतिभा से उस स्वप्न का अर्थ जाना। उस स्वप्न का अर्थ जानकर इष्ट कान्त (यावत्) मांगलिक मृदु मधुर और सश्रीक आदि वचनों से बोलता हुआ, इस प्रकार कहने लगा— ॥ २१ ॥

मूलम्— उराले णं तुमे देवी! सुविणे दिट्ठे, कल्लाणे णं तुमे जाव सस्सिरीए णं तुमे देवी! सुविणे दिट्ठे, आरोग्गतुट्ठिदीहाउकल्लाणमंगल्लकारए णं तुमे देवी सुविणे दिट्ठे, अत्थलाभो देवाणुप्पिए! भोगलाभो देवाणुप्पिए! पुत्तलाभो देवाणुप्पिए! रज्जलाभो देवाणुप्पिए! एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाणराइंदियाणं विइक्कंताणं अम्हं कुलकेउं कुलदीवं कुलपव्वयं कुलवडेंसयं कुलतिलगं कुलकित्तिकरं कुलनन्दिकरं कुलजसकरं कुलाधारं कुलपायवं कुलविवद्धणकरं सुकुमालपाणिपायं अहीणपडिपुन्नपंचिंदियसरीरं जाव ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं देवकुमारसमप्पभं दारगं पयाहिसि। से वि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विन्नायपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते सूरे वीरे विक्कंते वित्थिन्नविउलबलवाहणे रज्जवई राया भविस्सइ। तं उराले णं तुमे जाव सुमिणे दिट्ठे, आरोग्गतुट्ठिजावमंगल्लकारए णं तुमे देवी सुविणे दिट्ठेत्तिकट्टु धारिणिं देविं ताहिं इट्ठाहिं जाव वग्गूहिं दोच्चं पि तच्चं पि अणुवूहति ॥ २२ ॥

भावार्थ— हे देवी! तुमने उदार स्वप्न देखा है। तुमने कल्याणकारी स्वप्न देखा है। हे देवी! तुमने सश्रीक स्वप्न देखा है। हे देवी! तुमने आरोग्य संतोष दीर्घ-आयु कल्याण और मंगल करने वाला स्वप्न देखा है। हे देवानुप्रिये! अर्थ-लाभ होगा। हे देवानुप्रिये! भोग का लाभ होगा। हे देवानुप्रिये! पुत्र का लाभ होगा। हे देवानुप्रिये! राज्य

का लाभ होगा। इस प्रकार हे देवानुप्रिये! पूरे नव महीने और साढ़े सात दिन बीत जाने पर, हमारे कुल की ध्वजा के समान, कुल के दीपक, कुल में पर्वत के समान, कुल के मुकुट, कुल के तिलक, कुल की कीर्ति बढ़ाने वाले, कुल की समृद्धि करने वाले, कुल का यश करने वाले, कुल के आधार, कुल को आश्रय देने में वृक्ष के समान, कुल को बढाने वाले, कोमल हाथ पैर वाले, सुन्दर और पांचों इन्द्रियों से पूर्ण शरीरवाले (यावत्) सौम्य आकृति वाले, मनोहर, देखने में प्रिय, चन्द्रमा की तरह सुरूप, देवकुमार सरीखी प्रभावाले बालक को उत्पन्न करोगी—जन्म दोगी। वह बालक बाल्यावस्था को त्यागते ही बहत्तर कलाओं का विशेष जानकार होगा। यौवन अवस्था मे दानवीर, रणवीर, पराक्रमी, विस्तीर्ण और विपुल सेना तथा वाहनों (सवारियों) वाला राजराजेश्वर होगा॥ २२॥

मूलम्— तए णं सा धारिणी देवी अदीणसत्तुस्स रन्नो अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठजावहियया करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी— एवमेयं देवाणुप्पिया! तहमेयं देवाणुप्पिया! अवितहमेयं देवाणुप्पिया! असंदिद्धमेयं देवाणुप्पिया! इच्छियमेयं देवाणुप्पिया! पडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! इच्छियपडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! से जहेयं तुब्भे वदहत्तिकट्टु तं सुविणं सम्मं पडिच्छइ; पडिच्छित्ता अदीणसत्तुएणं रण्णा अब्भणुन्नाया समाणी णाणामणिरयणभत्तिचित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठेत्ता अतुरियमचवलजावगतीए जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ॥२३॥

भावार्थ— तुमने उदार (यावत्) स्वप्न देखा है। हे देवि! तुमने आरोग्य सन्तोष और (यावत्) मंगल करने वाला स्वप्न देखा है।

इस तरह धारिणी महारानी को इष्ट (यावत्) वचनों से राजा ने दो तीन बार कहा। उसी समय वह धारिणी रानी अदीनशत्रु राजा से इस विषय को सुनकर और हृदय मे धारण करके हर्षित और सन्तुष्ट होकर, हाथ जोड़कर आवर्तन करके मस्तक से अंजलि लगाकर इस प्रकार बोली- हे देवानुप्रिय! यह इसी प्रकार है। हे देवानुप्रिय! यह उसी प्रकार है। हे देवानुप्रिय! यह सत्य है, निस्सन्देह है, इष्ट है, अभीष्ट (प्रतीच्छित) है, इष्ट-अभीष्ट है। आप जो कहते है, उसे मैं अच्छी तरह अंगीकार करती हूं। (इस प्रकार) अंगीकार करके अदीनशत्रु राजा की आज्ञा मिलने पर नाना मणियों और रत्नों से विचित्र उस आसन (सिंहासन) से उठी। उठकर धीरे धीरे चपलता रहित (यावत्) राजहंस की गति से जहा अपनी सेज थी, वहीं आगई॥२३॥

मूलम्— तेणेव उवागच्छित्ता सयणिज्जंसि निसीयति, निसीइत्ता एवं वयासी–मा मे से उत्तमे पहाणे मंगल्ले सुविणे अन्नेहिं पावसुविणेहिं पडिहम्मिस्सइत्ति कट्टु देवगुरुजणसंबद्धाहिं पसत्थाहिं मंगल्लाहिं धम्मियाहिं कहाहिं सुविणजागरियं पडिजागरमाणी पडिजागरमाणी विहरति ॥ २४ ॥

भावार्थ— वहां आकर सेज पर बैठ गई। बैठ कर इस प्रकार बोली "मेरा वह उत्तम प्रधान और मांगलिक स्वप्न किसी दूसरे पाप स्वप्न से नष्ट न होजाय" इसलिए वह देव गुरु और जन सम्बन्धी अच्छी २ मांगलिक धर्मकथाओं से अपने स्वप्न के फल को बनाए रखने के लिए बार २ नींद को त्याग कर जागती रही ॥ २४ ॥

मूलम्—*तते णं से अदीणसत्तू राया पच्चूसकालसमयंसि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ। सद्दावेत्ता एवं वदासी-खिप्पा-

* ज्ञाता अध्य० १ सू० १२ से प्रारम्भ।

मेव भो देवाणुप्पिया बाहिरियं उवट्ठाणसालं अज्ज सविसेसं परमरम्मं गंधोदगसित्तसुइयसंमज्जिओवलित्तं पंचवन्नसरसमुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं कालागुरुपवरकुंदुरुक्क तुरुक्कधूवडज्झंत मघमघंतगंधुद्धुयाभिरामं सुगंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं करेह य, कारवेह य, एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। तते णं ते कोडुंबियपुरिसा, अदीणसत्तुणा रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा जाव पच्चप्पिणंति। तते णं से अदीणसत्तू राया कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मीलियंमि अहापंडुरे पभाए रत्तासोगप्पगासकिंसुयसुयमुह गुंजद्धरागबंधुजीवगपारावयचलणनयणपरहुयसुरत्तलोयणाजासुयणकुसुमजलियजलणतवणिज्जकलसहिंगुलयनिगररूवाइरेगरेहंतसस्सिरीए दिवागरे अह कमेण उदिए, तस्स दिणकरकरपरंपरावयारपारद्धंमि अंधयारे बालातवकुंकुमेणं खचियव्वजीवलोए लोयणविसयाणुयासविगसंतविसदृदंसियंमि लोए कमलागरसंडबोहए उट्ठियंमि सूरे सहस्सरस्सिमि दिणयरे तेयसा जलंते सयणिज्जाओ उट्ठेति, उट्ठेत्ता जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छइ ॥ २५ ॥

भावार्थ— इस के अनन्तर प्रातःकाल उस अदीनशत्रु राजा ने अपने सेवकों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार बोला— भो देवानुप्रिय! आज शीघ्र ही बाहर की उपस्थानशाला—सभास्थान को विशेष रूप से परम रमणीय, गन्धोदक से सींच कर पवित्र और साफ करो, लीपो, पांचों रंगों के सरस सुगन्धित फूलों से युक्त करो, कृष्णागर चीड़ लोबान आदि की मघमघायमान गन्ध से शोभित, अतएव गंध की गोली के समान सुगन्धित करो और दूसरों से कराओ। मेरी इस आज्ञा को पूरी करके मुझे सूचित करो। इसके बाद उन सेवकों ने अदीनशत्रु राजा के ऐसा कहने पर हर्षित

होते हुए आज्ञानुसार कार्य करके सूचित किया। पश्चात् जिसमें खिले हुए पद्म और कमलों (एक प्रकार के हरिणों) के नेत्र खुल गये थे ऐसे—स्वच्छ प्रभात होने पर, लाल अशोक के प्रकाश, ढाक के फूल, तोते की चोच, चिरमटी के आधे लाल हिस्से, दुपहरिया के फूल, कबूतर के पाव, कोयल की लाल लाल आखों, जपा कुसुम, जलती हुई अग्नि, सोने के कलश और हिंगुल के समूह की प्रभा से भी अधिक प्रभा वाले सूरज के क्रमश: उदित होने पर, और उस की किरणों के गिरने से अन्धकार का नाश प्रारम्भ होने पर बालसूर्य रूपी कुकुम से जीवलोक के रंगे जाने पर लोक में दखे जा सकने वाले विषयो (पदार्थों)का स्पष्ट प्रतिभास होने पर, कमलो को विकसित करते हुए एक हजार किरण वाला सूर्य तेज से चमकने लगा। उसी समय राजा अदीनशत्रु शय्या से उठा। उठकर जहां व्यायामशाला (अखाडा) थी वहां गया ॥ २५ ॥

मूलम्— उवागच्छइत्ता अट्टणसालं अणुपविसइ। अणुपविसित्ता अणेगवायामजोग्गवग्गणवामद्दणमल्लजुद्ध-करणेहिं संते परिसंते सयपागसहस्सपागेहिं सुगंधवरतेल्ल-माइएहिं पीणणिज्जेहिं दीवणिज्जेहिं दप्पणिज्जेहिं मद्दणिज्जेहिं विंहणिज्जेहिं सव्विंदियगायपल्हायणिज्जेहिं अब्भंगेहिं अब्भं-गिए समाणे तेल्लचम्मंसि पडिपुण्णपाणिपायसुकुमालकोमल-तलेहिं पुरिसेहिं छेएहिं दक्खेहिं पट्ठेहिं कुसलेहिं मेहावीहिं निउणेहिं निउणसिप्पोवगएहिं जियपरिस्समेहिं अब्भंगणप-रिमद्दणुव्वलणकरणगुणनिम्माएहिं, अट्ठिसुहाए मंससुहाए तयासुहाए रोमसुहाए चउव्विहाए सबाहणाए संवाहिए समा-णे अवगयपरिस्समे नरिंदे अट्टणसालाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ, उवा-गच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता समंत-

(मुत्त) जालाभिरामे विचित्तमणिरयणकोट्टिमतले रमणिज्जे ण्हाणमंडवंसि णाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि ण्हाणपीढंसि सुहनिसन्ने सुहोदगेहिं पुप्फोदगेहि गंधोदगेहि सुद्धोदगेहिं य पुणो पुणो कल्लाणगपवरमज्जणविहीए मज्जिए तत्थ कोउयसएहिं बहुविहेहिं कल्लाणगपवरमज्जणावसाणे पम्हलसुकुमालगंधकासाइयलूहियंगे अहतसुमहग्घदूसरयणसुसंवुडे सरससुरभिगोसीसचंदणाणुलित्तगत्ते सुइमालावन्नगविलेवणे आविद्धमणिसुवन्ने कप्पियहारद्धहारतिसरयपालंबपलंबमाणकडिसुत्तसुकयसोहे पिणद्धगेविज्जअंगुलिज्जगललियंगललियकयाभरणे णाणामणिकडगतुडियथंभियभुए अहियरूवसस्सिरीए कुंडलुज्जोइयाणणे मउडदित्तसिरए हारोत्थयसुकयरइयवच्छे पालंबपलंबमाणसुकयपडउत्तरिज्जे मुद्दियापिंगलंगुलीए णाणामणिकणगरयणविमलमहरिहनिउणोवियमिसमिसंतविरइयसुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठसंठियपसत्थआविद्धवीरवलए किं बहुणा, कप्परुक्खए चेव सुअलंकियविभूसिए नरिंदे सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं उभओ चउचामरवालवीइयंगे मंगलजयसद्दकयालोए अणेगगणनायगदंडनायगराईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियमंतिमहामंतिगणगदोवारियअमच्चचेडपीढमद्दनगरणिगमसेट्ठिसेणावइसत्थवाहदूयसंधिवालसद्धिं संपरिवुडे, धवलमहामेहनिग्गए विव गहगणदिप्पंतरिक्खतारागणाण मज्झे ससिव्व पियदंसणे नरवई मज्जणघराओ पडिनिक्खमति ॥ २६ ॥

भावार्थ— जाकर अखाड़े में प्रवेश किया। प्रवेश करके कसरत के योग्य उछलना कर एक दूसरे की आपस में बाहु आदि को मोड़कर और कुश्ती आदि कसरत करके थक जाने पर शतपुट और सहस्रपुट

वाले सुगंधित तेल आदि से, तथा रुधिर आदि धातुओं को सम करने वाले, जठराग्नि को दीप्त (तेज) करने वाले, काम को बढ़ाने वाले, मास को बढ़ाने वाले, पाचों इन्द्रियों और शरीरको प्रसन्न करनेवाले, तेल आदि के लेप से अविकल हाथ पैर वाले, सुन्दर और कोमल तलुवे वाले, अवसर को जानने वाले, ७२ कलाओं को जानने वाले, दक्ष, वाग्मी या आगे आगे चलने वाले, कुशल, मेधावी, निपुण, मर्दनके तत्वको जानने वाले, परिश्रम से न थकने वाले, लेप मालिश और उवटन के अभ्यासी पुरुषों द्वारा मालिश कराई और तैलचर्म (चमड़े के झामे) से रगड़ाया। हड्डियों को सुख देने वाली, मास को सुख देने वाली, चमड़े को सुख देने वाली, रोमों को सुख देने वाली, चार प्रकारकी सम्वाधना द्वारा आराम लेने से जब राजा की थकावट दूर होगई, तब वह मर्दनशाला से निकला। निकलकर स्नानागार में आया। आकर स्नानागार में घुसा। घुसकर सब तरफ से जालियों से सुन्दर चित्र विचित्र रत्न और मणियों से जड़े हुए तले वाले रमणीय स्नान मंडप में मणियों और रत्नों से खचित चौकी पर बैठकर, शुभोदक (पवित्र स्थानों से लाये हुए जल) गंधोदक (चन्दनादि मिश्रित जल) पुष्पोदक (फूलकी गंध मिले हुए जल) और शुद्धोदक(स्वाभाविक जल) से स्वास्थ्यकर विधि से कौतुक पूर्वक बार २ स्नान किया। स्नान कर चुकने पर रुएँदार सुन्दर सुगंधित सुकोमल वस्त्र से शरीर पोंछा और बहुमूल्य नवीन वस्त्र पहना। उसी समय घिसा हुआ सुगन्धयुक्त गोशीर्ष चन्दन का शरीर पर लेप किया। पवित्र फूल-माला धारण की और केसर आदि का लेप किया। मणियों और सोने के गहने पहने। हार (अठारह लडों का) अर्द्धहार (नव लड़ा) और तीन लड़ा हार पहना। कमर में लम्बी और लटकते हुए झूमके वाली करधनी पहनी। गले में आभूषण और अंगुलियों में अंगूठियां पहिनीं। इनके सिवाय और भी बहुत से सुन्दर २ आभूषण धारण किए। अनेक तरह के हाथ और भुजाओं के

मणिमय आभूषणों से उसके हाथ थँभ से गये थे। शरीर के अतिशय रूपवान् होने से वह और भी शोभायमान हुआ। कानों के कुण्डलों से मुख चमकने लगा। मुकुट से मस्तक दीप्त हो गया। हारों से वक्षस्थल(छाती) ढंक गया और सुन्दर मालूम होने लगा। एक लटकता हुआ लम्बा सा बढ़िया दुपट्टा धारण किया। अंगुलियां अंगूठियों से पीली हो गई। तथा चतुर कारीगरों द्वारा बनाए हुए नाना तरह के विमल विशिष्ट मनोहर देदीप्यमान अच्छे जोड़ वाले बहुमूल्य सोने मणि रत्नों के वीरवलय[1] धारण किए। ज्यादा क्या कहें? कल्पवृक्ष के समान आभूषणों से अलंकृत और वस्त्रों से भूषित, कोरण्टक आदि फूलों की मालाओं से बने हुए छत्र को धारण करने वाला नरेन्द्र, चार चामरों से शोभित अंग वाला, जिसे देखकर लोग जय२ शब्द कह रहे थे ऐसा वह राजा, अनेक गणनायक, दण्डनायक, माण्डलिक राजा, युवराज, तलवर (राजा द्वारा उपाधि प्राप्त) मुकुटबन्ध राजा, कौटुम्बिक (कुछ कुटुम्बों के स्वामी) मंत्री, महामंत्री, ज्योतिषी या भण्डारी द्वारपाल (दरबान) राज्य के अधिष्ठाता, सेवक, पीठमर्दक (एक प्रकार के मित्रवत सेवक) प्रजा, राजकर्मचारी, सेठ, सेनापति, साहूकार, दूत और सन्धि की रक्षा करने वालों से घिरा हुआ राजा स्नान गृह से इस तरह निकला, जैसे उज्वल और बड़े २ बादलों में से निकला हुआ, ग्रहों से दीप्त नक्षत्र और तारागों के समुदाय में चन्द्रमा हो ॥ २६ ॥

मूलम्—पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्टाण-साला तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता सीहासणवरगते पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने। तते णं से अदीणसत्तू राया अप्पणो अदूरसामंते उत्तरपुरच्छिमे दिसिभागे अट्ठ भद्दासणाइं सेयवत्थपच्चुत्थुयाइं सिद्धत्थमंगलोवयारकयसंतिकम्माइं रया-

---

[1] कोई ऐसा वीर है, जो मुझे जीत कर इन्हें ले लेवे? ऐसी स्पर्द्धा करके जो वलय (कड़े) धारण किए जाते हैं, उन्हें 'वीरवलय' कहते हैं

वेइ । रयावित्ता णाणामणिरयणमंडियं अहियपेच्छणिज्जरूवं महग्घवरपट्टणुग्गयं सण्हबहुभत्तिसयचित्तट्ठाणं ईहामियउसभतुरयणरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं सुखचियवरकणगपवरपेरंतदेसभागं अब्भिंतरियं जवणियं अंछावेइ ॥ २७॥

भावार्थ— निकलकर जहा बाहरी सभा थी, वहा गया । सिंहासन के पास जाकर पूर्व दिशा मे मुह करके बैठा । इसके पश्चात् उस अदीनशत्रु राजा ने पास ही, ईशान कोण में, सफेद वस्त्रों से ढके हुए आठ भद्रासन रखाए । उन आसनों पर सरसों आदि मांगलिक उपचार द्वारा विघ्नों का उपशम करने के लिए शान्ति- कर्म किया ।

उन आसनो को रखवाकर नाना मणि और रत्नो से शोभायमान, दर्शनीय रूप वाली, बहुमूल्य और अच्छे (जहा अच्छे वस्त्र बनते है) शहर में बनी हुई, सूक्ष्म और अनेक प्रकार के बहुत से चित्रों का स्थान, भेडिया बैल घोडा मगर नर पक्षी सर्प किन्नर रुरु (एक प्रकार के मृग), अष्टापद, चमरी गाय, हाथी, वनलता, और पद्मलता आदि के चित्रों से चित्रित, जिसके कोने उत्तम सोने की कलावत्तू से मंडित थे, ऐसा अन्दर का पर्दा डाल दिया ॥ २७ ॥

मूलम्— अंछावइत्ता अच्छ (? त्थ) रगमउअमसूरगउच्छ (त्थ) इयं धवलवत्थपच्चुत्थुयं विसिट्टं अंगसुहफासयं सुमउयं धारिणीए देवीए भद्दासणं रयावेइ । रयावेत्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वदासी- खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अट्ठंगमहानिमित्तसुत्तत्थपाढए विविहसत्थकुसले सुमिणपाढए सद्दावेह । सद्दावेत्ता एयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणह । तते णं ते कोडुंबियपुरिसा अदीणसत्तुणा रण्णा

एवं वुत्ता समाणा हट्टतुट्ठजावहियया करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं देवो तहत्ति, आणाए विणएणं वयणं पडिसुणंति। पडिसुणेत्ता, अदीणसत्तुस्स रण्णो अंतियाओ पडिनिक्खमंति ॥ २८ ॥

भावार्थ— पर्दा डालकर, महारानी धारिणी के लिए वहां एक अच्छा सा सिंहासन रखवाया। सिंहासन पर कोमल गलीचा और गलीचे पर एक सफेद वस्त्र बिछाया गया। सिंहासन अच्छा और कोमल होनेसे शरीर को आराम पहुँचाने वाला था। सिंहासन रखवाकर सेवकों को बुलाया। बुलवाकर कहा — हे देवानुप्रिय! शीघ्र ही अष्टाग ज्योतिष शास्त्र के पाठकों को— जो कि अनेक शास्त्रों में कुशल हैं— और स्वप्नशास्त्रियों को बुलाओ। बुलाकर शीघ्र ही मुझे सूचित करो। अदीनशत्रु राजा के यह कहने पर, सेवकों का हृदय हर्षित और सन्तुष्ट होगया। वे लोग, दोनों हाथ जोड़कर, दसों नखों (अंगुलियों) को इकट्ठा करके, मस्तक के पास अंजलि करके बोले—देव! आपकी आज्ञा प्रमाण है—ऐसा ही होगा। इस प्रकार कहकर आज्ञा को स्वीकार किया। स्वीकार करके राजा अदीनशत्रु के पास से चल दिये ॥ २८ ॥

मूलम्—पडिनिक्खमित्ता हत्थिसीसस्स नगरस्स मज्झंमज्झेणं जेणेव सुमिणपाढगाणं गिहाणि, तेणेव उवागच्छन्ति, उवागच्छित्ता सुमिणपाढए सद्दावेंति। तते णं ते सुमिणपाढगा अदीणसत्तुस्स रन्नो कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्टतुट्ठजावहियया ण्हाया कयबलिकम्मा जावपायच्छित्ता अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा हरियालियसिद्धत्थयकयमुद्धाणा सएहिं सएहिं गेहेहिंतो पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता हत्थिसीसस्स नगरस्स मज्झंमज्झेणं जेणेव अदीणसत्तुस्स रण्णो भवणवडिंसगदुवारे तेणेव उवागच्छंति,

उवागच्छित्ता एगयओ मिलयंति, एगयओ मिलइत्ता अदीणसत्तुस्स रण्णो भवणवडिंसगदुवारेणं अणुपविसंति। अणुपविसित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव अदीणसत्तू राया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता अदीणसत्तुं रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति। अदीणसत्तुणा रण्णा अच्चिया वंदिया पूइया माणिया सक्कारिया सम्माणिया समाणा पत्तेयं पत्तेयं पुव्वुन्नत्थेसु भद्दासणेसु निसीयंति ॥२६॥

भावार्थ— जाकर हस्तिशीर्ष नगर के बीचों बीच होकर, जहां स्वप्न शास्त्रियों के घर थे, वहाँ पहुँचे। पहुँचकर स्वप्नशास्त्रियों को बुलाया। अदीनशत्रु राजा के आदमियों द्वारा बुलाए जाने पर स्वप्नज्ञ भी बहुत सन्तुष्ट हुए—प्रसन्न चित्त हुए। स्नान करके, गृह-देवतों की पूजा करके, ललाट पर मांगलिक तिलक और मस्तक पर दही चावल आदि छिटककर, थोड़े किन्तु बहुमूल्य आभरणों से शरीरको अलकृत करके, मस्तक पर दूब और सरसों आदि रखकर अपने अपने घरों से निकले। निकलकर हस्तिशीर्ष नगरके बीच में होकर, जिस तरफ अदीनशत्रु राजा के मुख्य महल का दर्वाजा था, उसी तरफ गये। जाकर, सब इकट्ठे हुए। इकट्ठे होकर, मुख्य महल के द्वार में घुसकर जहा बाहरी सभा और राजा अदीनशत्रु थे, वहां गये। जाकर 'जय हो' 'विजय हो' कहकर राजा को बधाई दी। राजा अदीनशत्रु ने भी उन सब की अर्चना की, वन्दना की, पूजा की, मान किया, सत्कार और सन्मान किया। वे पहले रक्खे हुए उन भद्रासनों पर अलग अलग बैठ गये ॥ २६ ॥

मूलम्— तते णं से अदीणसत्तू राया जवणियंतरियं धारिणिं देविं ठवेइ। ठवेत्ता पुप्फफलपडिपुन्नहत्थे परेणं विनएणं ते सुमिणपाढए एवं वदासी—एवं खलु देवाणुप्पिया! धारिणी देवी अज्ज तंसि तारिसयंसि सयणिज्जंसि

जाव महासुमिणं पासित्ता णं पडिबुद्धा । तं एयस्स णं देवाणुप्पिया ! उरालस्स जाव सस्सिरीयस्स महासुमिणस्स के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ ? ॥ ३० ॥

भावार्थ— पश्चात् अदीनशत्रु राजाने पर्दे के अन्दर धारिणी महारानी को बैठाया । बैठाकर फल फूल हाथ में लेकर, विनयपूर्वक, उन स्वप्नज्ञों से इस प्रकार कहने लगा—भो देवानुप्रिय ! आज उस पहले वर्णन की गई शय्या पर सोते समय धारिणी महारानी (यावत्) महास्वप्न देखकर उठी है । भो देवानुप्रिय ! इस महान् उदार और सश्रीक स्वप्न का क्या मंगलमय फल होगा ? ॥ ३० ॥

मूलम्— तते णं ते सुमिणपाढगा अदीणसत्तुस्स रण्णो अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जावहियया तं सुमिणं सम्मं ओगिण्हंति, ओगिण्हित्ता ईहं अणुपविसंति, अणुपविसित्ता अन्नमन्नेण सद्धिं संचालेंति, संचालित्ता तस्स सुमिणस्स लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा अभिगयट्ठा अदीणसत्तुस्स रन्नो पुरओ सुमिणसत्थाइं उच्चारेमाणे उच्चारेमाणे एवं वयासी— एवं खलु अम्हं सामी ! सुमिणसत्थंसि बायालीसं सुमिणा तीसं महासुमिणा बावत्तरि सव्वसुमिणा दिट्ठा । तत्थ णं सामी ! अरिहंतमायरो वा चक्कवट्टिमायरो वा अरिहंतंसि वा चक्कवट्टिंसि वा गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं तीसाए महासुमिणाणं इमे चउद्दस-महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति

तं जहा—

गयउसभसीहअभिसेयदामससिदिणयरं झयं कुंभं ।
पउमसरसागरविमाणभवणरयणुच्चयसिहिं च ॥ १ ॥

वासुदेवमायरो वा वासुदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं

चउद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नयरे सत्तमहासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति। बलदेवमायरो वा बलदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसि चउद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नयरे चत्तारि महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति। मंडलियमायरो वा मंडलियंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसि चउद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नयरं एगं महासुमिणं पासित्ता णं पडिबुज्झंति। इमे य णं सामी! धारिणीए देवीए एगे महासुमिणे दिट्ठे, तं उराले णं सामी! धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे, जाव आरोग्गतुट्ठिदीहाउकल्लाणमंगल्लकारए णं सामी! धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे, अत्थलाभो सामी! सोक्खलाभो सामी! भोगलाभो सामी! पुत्तलाभो रज्जलाभो, एवं खलु सामी! धारिणी देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं जाव दारगं पयाहिसि॥ ३१ ॥

भावार्थ— स्वप्नशास्त्री अदीनशत्रु राजा से इस विषय को सुनकर, हृदय में धारण करके संतुष्ट हुए। हृदय हर्ष से भर गया। उन्होंने उस स्वप्न का अवग्रह किया। अवग्रह करके स्वयं ईहा- विचार करने लगे। ईहा करके आपसमें चर्चा करने लगे। चर्चा करनेसे जब उसका फल मालूम होगया, ग्रहीत होगया, आपस में पूछताछ करने से निश्चित होगया, विनिश्चित होगया और पूर्ण निश्चित होगया, तब वे राजा अदीनशत्रु के साम्हने शास्त्रों के वाक्य उच्चारण कर करके बोले— स्वामिन्! हमने स्वप्न- शास्त्र में सब बहत्तर स्वप्न देखे है— बयालीस साधारण और तीस महान् स्वप्न। हे राजन्! इनमे से जब अर्हन्त और चक्रवर्ती अपनी माताके गर्भ मे आते है, तब उनकी माताए इन तीस महास्वप्नों मे से चौदह महास्वप्न देखकर जागती है। वे चौदह स्वप्न इस प्रकार है— हाथी १ बैल २ सिंह ३ लक्ष्मी का अभिषेक ४ फूलो की माला ५ चन्द्रमा ६

सूर्य ७ ध्वजा ८ कलश ६ कमल सहित सरोवर १० समुद्र ११ वैमानिक देवो का विमान या भवनपति देवों का भवन १२ रत्नों की राशि और १४ अग्नि की ज्वाला।

जब वासुदेव गर्भमें आते है, तब उनकी माताए, इन चौदह महास्वप्नों में से कोई सात महास्वप्न देखकर जागती हैं। जब वलदेव गर्भ में आते है, तब उनकी माताए इन चौदह महास्वप्नोंमें से कोई चार सपने देखकर जागती है। जब माटलिक राजा गर्भमें आते हैं, तब उनकी माताएं इन चौदह स्वप्नों में से एक स्वप्न देखकर जागती हैं। इन स्वप्नों में से धारिणी महारानी ने एक महान् स्वप्न देखा है। वह स्वप्न उदार है। हे स्वामिन्! (यावत्) आरोग्य सन्तोष दीर्घायु कल्याण और मंगलकारी स्वप्न धारिणी देवी ने देखा है। स्वामिन! अर्थ- लाभ होगा, सुख-लाभ होगा, भोग- लाभ होगा, पुत्र- लाभ होगा और राज्य- लाभ होगा। हे स्वामिन्! इस तरह धारिणी महारानी पूरे नव महीने बीत जाने पर (यावत्) पुत्र का प्रसव करेगी॥ ३१॥

मूलम्— से वि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विन्नायपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते सूरे वीरे विक्कन्ते वित्थिन्नविपुलबलवाहणे रज्जवई राजा भविस्सइ अणगारे वा भावियप्पा, तं उराले णं सामी! धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे, जाव आरोग्गतुट्ठि जाव दिट्ठेत्ति कट्टु भुज्जो भुज्जो अणुवूहेंति। तते णं अदीणसत्तू राया तेसिं सुमिणपाढगाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए करयल जाव एवं वदासी-एयमेयं देवाणुप्पिया! जाव जण्णं तुब्भे वदहत्ति कट्टु, तं सुमिणं सम्मं पडिच्छति, पडिच्छित्ता ते सुमिणपाढए विपुलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थगंधमल्लालंकारेण य सक्कारेति सम्माणेति, सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता विपुलं जी-

वियारिहं पीतिदाणं दलयति, दलइत्ता पडिविसज्जेइ। तते णं से अदीणसत्तू राया सीहासणाओ अब्भुट्ठेति, अब्भुट्ठित्ता जेणेव धारिणी देवी तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता धारिणीदेवि एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिए! सुमिणसत्थंसि बायालीसं सुमिणा तीसं महासुमिणा जाव एगं महासुमिणं जाव भुज्जो भुज्जो अणुवूहति॥ ३२॥

भावार्थ— स्वामिन्! वह बालक बाल्यावस्था का त्याग कर कलाओं का ज्ञाता होगा। यौवन मे प्रवेश करके दानी वीर विक्रमवान् सेना और वाहन आदि का बढाने वाला, राज्य का स्वामी राजा होगा। अथवा आत्मा मे लीन होनेवाला मुनि होगा। इस प्रकार का उत्तम स्वप्न धारिणी देवी ने देखा है। इस स्वप्न के देखने से (यावत्) आरोग्य होगा, सन्तोष होगा, इस प्रकार स्वप्नज्ञ लोग बारबार कहने लगे।

अदीनशत्रु राजा स्वप्नज्ञों से यह फल सुनकर और हृदय में धारणकर (यावत्) हर्षित और सन्तुष्ट हुआ। (यावत्)हाथ जोडकर इस प्रकार बोला, हे देवानुप्रिय! यह ऐसा ही है, आप लोगों ने स्वप्न का जो फल कहा है, वह मैंने अच्छी तरह समझ लिया है। समझकर उन स्वप्न शास्त्रियों को बहुत सा अशन पान खाद्य स्वाद्य और वस्त्र सुगंधित मालाओं तथा अलंकारों से सत्कार किया, सन्मान किया। सत्कार और सन्मान करके आजीविका के योग्य प्रीति पूर्वक दान दिया। दान देकर उन्हें अपने अपने घर विदा किए। पश्चात् अदीनशत्रु राजा सिंहासन से उठा। उठकर धारिणी देवी के पास आया। आकर इस प्रकार बोला— हे देवानुप्रिये! स्वप्न शास्त्र में बयालीस साधारण स्वप्न और तीस महास्वप्न है। (यावत्) उन में से तुमने एक स्वप्न देखा है। ऐसा बार बार कहने लगा॥ ३२॥

मूलम्— तते णं सा धारिणी देवी अदीणसत्तुस्स रण्णो अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ जाव हियया तं सुमिणं सम्मं

पडिच्छइ, पडिच्छित्ता जेणेव सए वासघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सयं भवणमणुप्पविट्ठा । तए णं सा धारिणी देवी ण्हाया कयबलिकम्मा जाव सव्वालंकारविभूसिया तं गब्भं णातिसीतेहिं नातिउण्हेहिं नातितित्तेहिं नातिकडुएहिं नातिकसाएहिं नातिअंबिलेहिं नातिमहुरेहिं उउभयमाणसुहेहिं भोयणच्छायणगंधमल्लेहिं जं तस्स गब्भस्स हियं मियं पत्थं गब्भपोसणं तं देसे य काले य आहारमाहारेमाणी विवित्तमउएहिं सयणासणेहिं पतिरिक्कसुहाए मणाणुकूलाए विहारभूमीए पसत्थदोहला संपुन्नदोहला संमाणियदोहला अविमाणियदोहला वोच्छिन्नदोहला ववणीयदोहला ववगयरोगमोहभयपरित्तासा तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहति ॥३३॥

भावार्थ— तत्पश्चात् वह धारिणी महारानी अदीनशत्रु राजा से इस विषय को सुनकर बहुत ही सन्तुष्ट हुई । स्वप्न को अच्छी तरह समझकर जिधर निवास- गृह था, उधर चली गई । जाकर अपने महल में घुस गई। वहा जाकर स्नान किया, पुजादि (यावत्) सर्व अलङ्कारों को धारण किया। न अधिक शीत, न अधिक उष्ण, न अधिक तीखे, न अधिक कडुवे, न अधिक कसायले, न अधिक खट्टे न अधिक मीठे, अर्थात् ऋतु के अनुसार खाने ओढने और सुगन्धित मालाओं का— जो कि गर्भ के लिए हित मित और पथ्य थीं और गर्भ को पुष्ट करने वाली थीं— देश काल के अनुसार आहार और उपयोग करने लगी। एकान्त और कोमल शय्या तथा आसनों द्वारा वचनागोचर सुख मिलने से, इच्छानुकूल घूमने की जगह होने से, उसे उत्तम इच्छा उत्पन्न हुई । वह पूरी हुई और इच्छानुकूल भोग मिलने पर लेशमात्र भी अपूर्ण न रही, तब दूर हो गई, अत एव वह इच्छा

१ भ० श० ११ उ० ११ पत्र ५२६ पृ० १ पं १३ से प्रारम्भ.

रहित हुई, रोग मोह और भय रहित होगई। इस तरह वह सुखपूर्वक गर्भ को धारण करने लगी ॥ ३३ ॥

मूलम्— ततो णं सा धारिणी देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाणराइंदियाणं वीतिक्कंताणं सुकुमालपाणिपायं अहीनपडिपुन्नपंचिंदियसरीरं लक्खणवंजणगुणोववेयं जाव ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं दारगं पयाया। तए णं तीसे धारिणीए देवीए अंगपडियारियाओ धारिणि देविं पसूयं जाणेत्ता जेणेव अदीणसत्तू राया तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता करयलपडिगहियं जाव अदीणसत्तुं रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति। जएणं विजएणं वद्धावेत्ता एवं वदासी— एवं खलु देवाणुप्पिया! धारिणी देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं जाव दारगं पयाया। तं एयण्णं देवाणुप्पियाणं पियट्ठयाए पियं निवेदेमो। पियं भे भवतु! तए णं से अदीनसत्तू राया अंगपडियारियाणं अंतिए एयमट्ठं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव धाराहयणीव जाव रोमकूवे तासिं अंगपडियारियाणं मउडवज्जं जहामालियं ओमोयं दलयति, दलइत्ता से तं रययामयं विमलसलिलपुन्नं भिंगारं य गिण्हति। गिण्हित्ता मत्थए धोवइ। धोवित्ता विउलं जीवियारिहं पीतिदाणं दलयति। दलइत्ता सक्कारेति सम्माणेति ॥३४॥

भावार्थ— पश्चात् नव महीने और साढे सात दिन अर्थात् सवा नौ महीने पूरे होने पर धारिणी देवी ने सुकोमल हाथ पैर वाले, सुडौल और पूर्ण पंचेन्द्रियशरीर वाले, लक्षण और तिलक आदि चिन्हों से युक्त (यावत्) चन्द्रमा की तरह सौम्य, कान्त, देखने मे सुन्दर, और सुरूप वाले बालक को जन्म दिया। धारिणी देवी की परिचारिकाएं उसे प्रसुता जानकर अदीनशत्रु राजा की ओर चलीं। जाकर हाथ जोड़कर 'जय हो,

विजय हो, कहकर बधाई दी। बधाई देकर बोली—"हे देवानुप्रिय! पूरे नव महीने बीत जानेपर धारिणी देवीने पुत्र का प्रसव किया है। हे देवानुप्रिय! आप की प्रीति के लिए यह प्रिय निवेदन (सूचना) किया है। आप को प्रिय हो"। राजा अदीनशत्रु, अंगमेविकाओं से यह बात सुनकर और हृदय में धरकर (यावत्) हर्षित और सन्तुष्ट हुआ। ऐसा रोमाञ्चित हो गया, जैसे कदम्ब पर जलधारा पड़ने से रोम उठ आए हों। वह जो आभूषण पहिने था, मुकुटके सिवाय सब दासियों को दे दिये। दान देकर चांदी के बने हुए सफेद, और जलसे भरे हुए भृंगार (झारी) को उठाया। उठाकर दासियों का सिर धोया, सिर धोकर मासीविका के योग्य विपुल प्रीति-दान दिया, प्रीतिदान देकर सत्कार किया सन्मान किया ॥ ३४ ॥

मूलम्— सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता * पडिविसज्जेति। तते णं से अदीणसत्तू राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी--खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! हत्थिसीसं णयरं आसित्त जाव परिगयं करेह, करेत्ता चारगपरिसोहणं करेह करेत्ता माणुम्माणवद्धणं करेह, करेत्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, जाव पच्चप्पिणंति। ततेणं से अदीणसत्तू राया अट्ठारस सेणिप्पसेणीओ सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! हत्थिसीसे नगरे अब्भिंतरबाहिरिए उस्सुक्कं उक्करं अभडप्पवेसं अडंडिमं कुडंडिमं अधरिमं अधारणिज्जं अणुद्धयमुइंगं अमिलायमल्लदामं गणियावर-नाडइज्जकलियं अणेगतालायराणुचरियं पमुइयपक्कीलिया-भिरामं जहारिहं ठिइवडियं दसदिवसियं करेह। करेत्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। ते वि करेंति, करेत्ता तहेव पच्चप्पिणंति ॥ ३५ ॥

* ज्ञाता अ०१ सू०१८ प०३७ पृ १ प०२ से प्रारम्भ

भावार्थ— सत्कार और सन्मान करके उन्हे (दासियों को) विदा किया। तदनन्तर राजा अदीनशत्रु ने सेवकों को बुलवाया, बुलवाकर बोले— हे देवानुप्रिय! हस्तिशीर्ष, नगर को शीघ्र साफ कराओ, और (यावत्) छिडकाव कराओ। सफाई करा कर कैदियो को छुडा दो। छुडाकर बजारभाव सस्ता करो। सस्ता करके मुझे सूचित करो। सेवकों ने यह सब कार्य समाप्त करके राजा को सूचित कर दिया। पश्चात् अदीनशत्रु महाराज ने कुम्हार आदि अठारह जातियों और अठारह उपजातियों को बुलवाया। बुलवाकर बोले— हस्तिशीर्ष, नगर के बाहर और नगर में जाकर ऐसा (प्रबन्ध) करो कि कोई दश दिन पर्यन्त चुंगी न ले, कर आदि न ले, राजा का कोई मनुष्य जनता को सन्ताप न दे, कोई अपराध का उचित या कम दंड नहीं देने पावे, अर्थात् अपराध का कुछ भी दण्ड न दिया जाय। कोई ऋण का तगादा न करे। कोई धरना देकर न बैठे। दूसरी जगह मृदंग आदि बाजे न बजाने पावे, तथा नगरको ताजी फूलमालाओंसे शोभमान करो। उत्तम गणिकाओं का नाच कराओ। बहुत से तालाचरों (नाटककारों) से नाटक कराओ। प्रमोद और क्रीडा करने वालों से नगर सुशोभित करो। इसके सिवाय पुत्रजन्म सम्बन्धी कुल की मर्यादा के अनुसार दश दिन तक और २ कार्य कराओ, कराकर हमें सूचित करो। उन छत्तीस श्रेणियों के लोगों ने भी सब कार्य करके महाराज को खबर दी ॥३५॥

मूलम्— तते णं से अदीणसत्तू राया बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने सइएहि य साहस्सिएहि य सयसाहस्सिएहि य जाएहि दाएहि भोगेहि दलमाणे दलमाणे पडिच्छेमाणे पडिच्छेमाणे एवं च णं विहरति। तते णं तस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे जातकम्मं करेंति, करेत्ता बितिए दिवसे जागरियं करेंत्ति, करेत्ता ततियदिवसे चंदसूरदंसणियं करेंनि, करेत्ता एवा-

मेव निव्वत्ते सुइजातकम्मकरणे संपत्ते बारसाहे दिवसे विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति, उवक्खडावेत्ता मित्तणाइनियगसयणसंबंधिपरिजणं बलं च बहवे गणणायगदंडनायग जाव आमंतेंति ततो पच्छा ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउय जाव सव्वालंकारविभूसिया महतिमहालयंसि भोयणमंडवंसि तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं मित्तणाइनियगसयणसंबंधि परियण जाव सद्धिं आसाएमाणा विसाएमाणा परिभाएमाणा परिभुंजेमाणा एवं च णं विहरंति ॥ ३६ ॥

भावार्थ— पश्चात् अदीनशत्रु राजा बाहर की सभा मे पूर्वदिशा की ओर मुह करके सिंहासन पर विराजे। देवपूजा के लिए और आहार अभय आदि दान के लिए सैकड़ो हजारों लाखों द्रव्यो का दान दिया। तदनन्तर उस बालक के माता पिता ने पहिले दिन जातकर्म (जन्म के समय की क्रियाए) किया। दूसरे दिन रात्रिजागरण किया, और तीसरे दिन चन्द्रमा और सूर्य के दर्शन के लिए उत्सव किया। छठे दिन जागरण किया। इन कार्यों से निवृत्त होकर शुचि जातकर्म करनेपर बारहवें दिन बहुतसा अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य भोजन बनवाया। और मित्र ज्ञाति (माता पिता भाई वगैरह) निजक (पुत्रादि) स्वजन (पिता के सम्बन्धी काका - वगैरह) सम्बन्धी (ससुर आदि) परिजन, सेना और बहुत से गणनायक, दण्डनायक आदि को (यावत्) आमन्त्रण दिलवाया। तत्पश्चात् स्नान किया। गृह- देवता की पूजा की। और कौतुक (तिलक आदि मंगलिक-चिन्ह) किया। समस्त अलङ्कारो से विभूषित हुआ, तथा बड़े भारी रसोड़े मे जाकर मित्र, ज्ञाति (यावत्) गणनायकों के साथ अशन पान खाद्य और स्वाद्य पदार्थो का स्वाद लिया। विशेष स्वाद लिया। दूसरों को बॉटा और उपभोग किया। अर्थात् जिसमे थोड़ा व्यर्थ जाए ज्यादा खाया जाय,

ज्याद: व्यर्थ जाय थोडा खाया जाय, पूरा खा लिया जाय, इस प्रकार के आहारों को प्रीति पूर्वक ग्रहण करने लगे ॥ ३६ ॥

मूलम्— जिमियभुत्तुत्तरागया वि य णं समाणा आयंता चोक्खा परमसुइब्भूया तं मित्तनातिनियगसयणसंबंधिपरियणगणनायग० विपुलेणं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेंति सम्माणेंति, सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता एवं वयासी-- अम्हं इमस्स दारगस्स नामेणं सुबाहुकुमारे, तस्स दारगस्स अम्मापियरो अयमेयारूवं गोणणं गुणणिप्फन्नं णामधेज्ज करेंति सुबाहुत्ति, तते णं से सुबाहुकुमारे पंचधाई परिग्गहिए तंजहा- खीरधाईए मंडणधाईए मज्जणधाईए कीलावणधाईए अंकधाईए अन्नाहि य बहूहि खुज्जाहि चिलाइयाहि वामणिवडभिबब्बरीबउसिजोणियपल्हविणईसिणियाचाधोरुगिणिलासियलउसियदमिलिसिंहलिआरबिपुलिंदिपक्कणिवहलिमुरुंडिसबरिपारसीहि णाणादेसीहि विदेसपरिमंडियाहि इंगितचितियपत्थियवियाणियाहि सदेसणेवत्थगहितवेसाहि निउणकुसलाहि विणीयाहि चेडियाचक्कवालवरिसधरकंचुइज्जमहयरगवंदपरिक्खित्ते हत्थाओ हत्थं साहरिज्जमाणे अंकाओ अंकं परिभुज्जमाणे परिगिज्जमाणे चालिज्जमाणे उवलालिज्जमाणे रम्मंसि मणिकोट्टिमतलंसि परिमिज्जमाणे परिमिज्जमाणे णिव्वायणिव्वाघायंसि गिरिकंदरमल्लीणेव चंपगपायवे सुहंसुहेणं वड्ढइ ॥३७॥

भावार्थ— भोजन करने के पश्चात् राजा और रानी सिंहासन पर विराजे। विराज कर निर्मल जल से परम पवित्र होकर, मित्र, ज्ञाति, निजी स्वजन, सम्बन्धी, परिजन और गणनायकों का फूल, वस्त्र सुगन्धित माला और अलंकारों से सत्कार और सन्मान किया। सत्कार और

सन्मान करके बोले— हमने इस बालक का गुण निष्पन्न 'सुबाहुकुमार' यह नाम रक्खा है। तदनन्तर सुबाहुकुमार को पाच धायों ने ग्रहण किया। वे इस प्रकार हैं— १ दूध पिलाने वाली, २ शृङ्गार कराने वाली, ३ स्नान कराने वाली, ४ खेल कराने वाली, ५ गोद में खिलाने और पलने में झुलाने वाली तथा और भी अनेक टेढ़ी जाघ वाली चिलात देश की, बौना शरीर वाली, बड़े पेट वाली, बर्बर देश की बकुश देशकी, योनक (जोणिय) देश की, पल्हव देश की, इसिनिक देश की, थारुकिन देश की, ल्हासक देश की, लकुसिक देश की, द्रविड़ देश की, सिंहल देश की, अरबदेशकी, पुलिन्ददेशकी, पक्कणदेशकी, बहलदेशकी, मुरुण्डदेशकी शबर देश की, फारस देश की इत्यादि बहुत से अनार्य देशों की स्वदेश और परदेश से प्राप्त होने वाली, चेष्टा से अभिप्राय को जानने वाली इशारे से मन से सोचे हुए को जानने वाली, वचन से न कहने पर भी आवश्यकता को समझने वाली, अपने २ देश का वेश पहनने वाली, बहुत ही चतुर और विनीत, दासियों के समूह और कंचुकी (रनवासके रखवाले) तथा अन्तःपुर की रक्षा की चिन्ता करनेवालों से घिरा हुआ हाथों हाथ रहने लगा। वह एक की गोद से दूसरे की गोद में जाता, दासियां गाना सुनातीं, झुलातीं और प्यार करती थीं। इस प्रकार अति रमणीय मणियों से विभूषित आगन में अनेक प्रकार के आनन्द करता हुआ बाधा रहित होकर खेलता हुआ सुबाहुकुमार पर्वत के मंडप में रहने वाले चम्पक वृक्ष के समान सुख से बढ़ने लगा ॥२७॥

मूलम्—+ तए णं तस्स सुबाहुस्स दारगस्स अम्मापियरो अणुपुव्वेणं ठिइवडियं वा चंदसूरदंसावणियं वा जागरियं वा नामकरणं वा परंगामणं वा पयचंकमणं वा जेमामणं वा पिंडवद्धणं वा पजंपावणं वा कण्णवेहणं वा

+ भगवती श-११ उ ११

संवच्छरपडिलेहणं वा चोलोयणगं वा उवणयणं वा अण्णाणि य बहूणि गब्भाधाणजम्मणमादियाइं कोउयाइं करेंति। * तते णं तं सुबाहुकुमारं अम्मापियरो सातिरेगअट्ठवासजातगं चेव गब्भट्ठमे वासे सोहणंसि तिहिकरणमुहुत्तंसि कलायरियस्स उवणेंति। तते णं से कलायरिए सुबाहुकुमारं लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ सउणरुयपज्जवसाणाओ बावत्तरिं कलाओ सुत्तओ य अत्थओ य करणओ य सेहावेति सिक्खावेति ॥३८॥ तं जहा—

भावार्थ— तत्पश्चात् उस सुबाहुकुमार बालक के माता पिता, कुल से स्थिति पतित (पुत्र जन्म का उत्सव विशेष) यावत् चन्द्रसूर्यदर्शन रात्रिजागरण, नामकरण, घुटनों से चलना, पैरों के बल खडे करना, भोजन कराना, ग्रास का बढाना, उच्चारण करवाना, कानों का छिदाना, वर्षगांठ मनाना, चोटी रखाना, उपनयन संस्कार (कला ग्रहण करवाना) आदि अनेक गर्भाधान और जन्म आदिके कौतुक करने लगे। इस प्रकार जब आठ वर्ष और कुछ दिन बीत गए, तब सुबाहुकुमार के माता पिताने उसे शुभतिथि शुभकरण और शुभमुहूर्त मे कलाचार्य (पण्डितजी) को सौंप दिया। सौंपने के अनन्तर पण्डितजी ने सुबाहुकुमार को लिखना, गणित से लेकर पक्षी आदिके बोलनेका शकुन ज्ञान तक बहत्तर कलाएँ, सूत्र अर्थ (व्याख्यान) और करण (प्रयोग) द्वारा सिखाई ॥३८॥ वे निम्न प्रकार है—

मूलम्— तंजहा—लेहं गणियं रूवं णट्टं गीयं वाइयं सरम(ग)यं पोक्खरगयं समतालं जूयं १०, जणवायं पासयं अट्ठावयं पोरेक (व) चं दगमट्टियं अन्नविहिं पाणविहिं वत्थविहिं विलेवणविहिं सयणविहिं २०, अज्जं पहेलियं मागहियं गाहं गीतियं सिलोयं हिरण्णजुत्तिं सुवण्णजुत्तिं चुन्नजुत्तिं

* ज्ञाता अ.१ सू.१८ पत्र३८ पृ १

आभरणविहिं ३०, तरुणीपडिकम्मं इत्थिलक्खणं पुरिसलक्खणं हयलक्खणं गयलक्खणं गोणलक्खणं कुक्कुडलक्खणं छत्तलक्खणं डंडलक्खणं असिलक्खणं ४०, मणिलक्खणं कागणिलक्खणं वत्थुविज्जं खंधारमाणं नगरमाणं वूहं पडिवूहं चारं पडिचारं चक्कवूहं ५०, गरुलवूहं सगडवूहं जुद्धं णिजुद्धं जुद्धातिजुद्धं अट्ठिजुद्धं मुट्ठिजुद्धं बाहुजुद्धं लयाजुद्धं ईसत्थं ६०, छुरप्पवायं धणुव्वेयं हिरन्नपागं सुवन्नपागं सुत्तखेड्डं वट्टखेड्डं नालियाखेड्डं पत्तच्छेज्जं कडच्छेज्जं सज्जीवं ७०, निज्जीवं सउणरुयमिति ॥ ३९ ॥

भावार्थ— १ अक्षर लिखने की कला २ गणितकला ३ रूपकला (चित्रकारी) ४ नाटक करने की कला ५ गानकला ६ बाजे बजाने का ज्ञान ७ स्वर के आलाप का विज्ञान ८ मर्दन वादन कला ९ समताल बनाना १० जुआ खेलने का ज्ञान ११ जनवाद (वादविवाद करना) १२ पासा खेलने का ज्ञान १३ शतरंज या चौपड़ खेलने का ज्ञान १४ ग्राम नगर आदि की रक्षा करना १५ जल और मिट्टी के संयोग से बनने वाली वस्तुओं का ज्ञान १६ अन्न पकाने की कला १७ जल के संस्कार करने की कला १८ वस्त्र सम्बन्धी सब तरह का ज्ञान १९ शरीर पर तेल आदि का मर्दन— लेप करने का ज्ञान २० शयन का ज्ञान २१ आर्या छन्द में रचना करने का ज्ञान २२ पहेली बनाने की कला २३ मागधी भाषा की कविता बनाने का ज्ञान २४ गाथा रचना करने का ज्ञान २५ गीत बनाने का ज्ञान २६ श्लोक बनाने का ज्ञान २७ चांदी बनाने की विधि का ज्ञान २८ सुवर्ण बनाने की विधि का ज्ञान २९ चूर्ण (अबीर आदि) बनाने का ज्ञान ३० आभूषण घड़ने का ज्ञान ३१ तरुण स्त्री का शृंगार सम्बन्धी ज्ञान ३२ स्त्रियों के लक्षणों का ज्ञान ३३ पुरुषों के लक्षणों का ज्ञान ३४ घोड़ों के लक्षणों का ज्ञान ३५ हाथियों के लक्षणों का ज्ञान

३६ गाय बैल के लक्षणों का ज्ञान ३७ मुर्गों के लक्षणों का ज्ञान ३८ छत्र के लक्षण का ज्ञान ३९ बास आदि के दण्डों के लक्षण का ज्ञान ४० तलवार के लक्षण का ज्ञान ४१ काकणी (व्याघ्री हसी आदि) के लक्षण का ज्ञान ४२ मणियों के लक्षण का ज्ञान ४३ वास्तु शास्त्र (घर आदि-बनाने की विधि) का ज्ञान ४४ अक्षौहिणी आदि सेना के निर्माण (रचना) करने की कला ४५ नगर बसाने के परिमाण का ज्ञान ४६ व्यूह रचना करने का ज्ञान ४७ शत्रुसेना के व्यूह को भेदने की कला ४८ सेना का सचार करने का ज्ञान ४९ विरोधी सेना के विरुद्ध सेना सचार करने का ज्ञान ५० चक्र के आकार की व्यूह-रचना करने का ज्ञान ५१ गरुडाकार व्यूह-रचना करने का ज्ञान ५२ शकट (गाडी) के आकार व्यूह रचना करने का ज्ञान ५३ सग्राम (युद्ध) करने का ज्ञान ५४ विशेष युद्ध करने का ज्ञान ५५ धावा मारकर घोर सग्राम करने का ज्ञान ५६ अस्थि (हड्डी) से युद्ध करने का ज्ञान ५७ मुष्टि (मुट्ठियों से) युद्ध करने का ज्ञान ५८ बाहु-युद्ध करने का ज्ञान ५९ लतायुद्ध करने का ज्ञान ६० बाण शास्त्र का ज्ञान अथवा थोडी चीज को बहुत और बहुत को थोडी दिखाने की कला ६१ खुरपे सरीखे शस्त्र चलाने का ज्ञान ६२ धनुर्विद्या का ज्ञान ६३ हिरण्यपाक (चादी शुद्ध करने) का ज्ञान ६४ सुवर्णपाक (सोना शुद्ध करने) का ज्ञान ६५ सूत्रछेदन कला ६६ ग्रन्थिखेट कला ६७ कमल के दण्ड को भेदने की कला ६८ पत्तों को छेदने की कला ६९ कट (चटाई) के समान वस्तुओं को छेदने का ज्ञान ७० मरे हुए को मत्र से जिन्दा करने का ज्ञान ७१ जिन्दे को मरा सा दिखाने की कला और ७२ पक्षियो का शब्द सुनकर शुभाशुभ फल का ज्ञान ॥ ३९ ॥

मूलम्— तते णं से कलायरिए सुबाहुं कुमारं लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ सउणरुयपज्जवसाणाओ बावत्तरि-कलाओ सुत्तओ य अत्थओ य करणओ य सेहावेति सिक्खा-

वेति, सेहावेत्ता सिक्खावेत्ता अम्मापिऊणं उवणेइ। तते णं सुबाहुकुमारस्स अम्मापियरो तं कलायरियं महुरेहिं वयणेहिं विपुलेणं वत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेंति सम्माणेंति। सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता विपुलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयंति। दलइत्ता पडिविसज्जेंति। तते णं से सुबाहुकुमारे बावत्तरिकलापंडिए णवंगसुत्तपडिबोहिए, अट्ठारसविहिप्पगारदेसीभासाविसारए गीयरई गंधव्वनट्टकुसले हयजोही गयजोही रहजोही बाहुजोही बाहुप्पमद्दी अलंभोगसमत्थे साहसिए वियालचारी जाए यावि होत्था। तते णं तस्स सुबाहुकुमारस्स अम्मापियरो सुबाहुं कुमारं बावत्तरिकलापंडियं जाव वियालचारी जायं पासंति। पासित्ता पंचसयपासायवडिंसगे करेंति, अब्भुग्गयमूसिय पहसिय विव मणिकणगरयणभत्तिचित्ते वाउद्धुयविजयवेजयंतीपडागाछत्ताइछत्तकलिए तुंगे गगणतलमभिलंघमाणसिहरे जालंतररयणपंजरुम्मिल्लियव्व मणिकणगथूभियाए वियसियसयपत्तपुंडरीए तिलयरयणद्धचंदच्चिए णाणामणिमयदामालंकिते अंतो बहिं च सण्हे, तवणिज्जरुइलवालुयापत्थरे सुहफासे सस्सिरीयरूवे पासादीए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे, तेसिं णं पासादवडिंसगाणं बहुमज्झदेसभागे एत्थ णं महेगं भवणं करेंति, अणेगखंभसयसन्निविट्ठं लीलट्ठियसालभंजियागं अब्भुग्गयसुकयवयरवेइयातोरणं वररइयसालभंजियासुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठसंठियपसत्थवेरुलियखंभं णाणामणिकणगरयणखचियउज्जलं बहुसमसुविभत्तनिचितरमणिज्जभूमिभागं ईहामियउसभतुरगणरमगरविहगवालगकिण्णररुरुसरभचमरकुंजर-

१ चेव। २ भग० श० ११ उ० ११ पत्र ५४४ पृ २ प ३ से। ३ जाता चालु।

थणलयपउमलयभत्तिचित्तं खंभुग्गयवयरवेइयापरिगयाभि-
रामं विज्जाहरजमलजुयलजुत्तं पि व अच्चिसहस्समालणीयं
रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं भिब्भिसमाणं चक्खुल्लोयण-
लेसं सुहफासं सस्सिरीयरूवं कंचणमणिरयणथूभियागे
णाणाविहपंचवण्णघंटापडागपरिमंडियग्गसिहरं धवलमरी-
चिकवयं विणिम्मुयंतं लाउल्लोइयमहियं गोसीससरसरत्तचं-
दणदद्दरदिन्नपंचंगुलितलं उवचियचंदणकलसं चंदणघडसुकय-
तोरणपडिदुवारदेसभागं आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियम-
ल्लदामकलावं पंचवण्णसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं
कालागरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामं सु-
गंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं पासादीयं दरिसणिज्जं अभिरूवं
पडिरूवं ॥ ४० ॥

भावार्थ—कलाचार्य ने लिपि और गणित से लगाकर शकुनरुत तक बहत्तर कलाओं को सूत्र अर्थ और करण (प्रयोग) करके सुबाहुकुमार को सिखाया, और सिखाकर उसके माता पिता को वापस सौंप दिया। सुबाहुकुमार के माता पिताने भी मधुर वचनों बहुत से वस्त्र फूलमाला और आभूषणों से आचार्य का सत्कार-सन्मान किया। सत्कार सन्मान करके इतना दान दिया, कि वह उन के समस्त जीवन को पर्याप्त था। दान देकर उन्हें विदा किया। अब सुबाहुकुमार बहत्तर कलाओं मे कुशल हुआ। उसके २ कान २ नाक २ आंखें १ स्पर्शन इन्द्रिय १ जिह्वा और १ मन ये नौ अंग जाग से गए, अर्थात् विशिष्ट ज्ञानवाले हुए, अठारह देश-भाषाओं मे प्रवीण हुआ। गीतों का प्रेमी तथा गाने और नृत्य करने मे प्रवीण हुआ। घोड़े, हाथी और रथ द्वारा युद्ध करने वाला हुआ। बाहुयुद्ध करने वाला, भुजाओं को मर्दन करने वाला और पर्याप्त भोग भोगने मे सशक्त हुआ। वह अपने साहस के

* ज्ञाता अ. १. सूत्र १९ तक।

वल्पर अकाल में ही विचरण करता था।

सुबाहुकुमार के माता पिता ने सुबाहुकुमार को बहत्तर कलाओं में प्रवीण (यावत) अकाल ही में विचरण करने वाला जानकर पांचसौ उत्तम उत्तम महल बनवाए। वे महल बहुत ऊंचे थे और स्वच्छ प्रभा से ऐसे मालूम होते, मानों हँस रहे हैं। मणि, सुवर्ण, और रत्नों से रचित होने से अचम्भा पैदा करते थे। विजय की सूचना करने वाली वायु से हिलती हुई पताकाओं और पताकाओं के ऊपर की पताकाओं तथा छत्र और छत्रों के ऊपर के छत्रों से युक्त थे। बहुत ऊँचे थे, अतः ऐसे मालूम होते थे, मानो उन के शिखर आकाशतल को लांघ रहे हों। जालियों के मध्य-भाग में अथवा खिड़कियों में लगे हुए रत्न चमकते थे। खम्भ, मणि और सुवर्ण से जड़े हुए थे। उन में शतपत्र (सौ पत्ते वाले) कमल खिले हुए थे। तिलक रत्न और सीढ़ियों से युक्त थे। नाना मणिमय मालाओं से शोभमान थे। भीतर बाहर से चिकने थे। तपे हुए सोने की सुन्दर रेत के बने हुए फर्शवाले महलों के आंगन बड़े भले मालूम होते थे। छूने में अच्छे, सुन्दर रूपवाले चित्तको प्रसन्न करने वाले, दर्शनीय मनोहर और देखने वालों को भिन्नभिन्न रूप वाले मालूम होते थे। उन उत्तम महलोंके बीचोंबीच एक बड़ा भवन बनवाया, उसमें सैकड़ों खम्भ बने थे, जिसमें लीला करती हुई पुतलियां बनी हुई थीं। वज्रमय वेदिकाओं पर तोरण बने थे। तोरणों के ऊपर भी सुन्दर२ पुतलियां बनाई गई थीं। विशेष आकार वाले सुन्दर और स्वच्छ जड़े हुए वैडूर्य मणि के खम्भों पर पुतलियाँ बनी हुई थीं। अनेक मणि सुवर्ण रत्नोंसे वह भवन प्रकाशित था। वहाँ की भूमि समतल अच्छी तरह रची हुई और अतिशय रमणीय थी। उसमें भेड़िया बैल घोड़ा मनुष्य मगर पक्षी सर्प किन्नर मृग अष्टापद चमरी गाय हाथी वनलता और पद्मलताओं के चित्र बने थे। खम्भों के ऊपर हीरे की बनी हुई वेदिकाओं से मनोहर था। एकही पंक्ति में विद्याधरों के

जोडों की चलती फिरती प्रतिमाएँ बनी थीं। उसमे से हजारों किरणे निकल रहीं थीं। उस मे हजारों रूप थे। देदीप्यमान था- अतिशय देदीप्यमान था। उसे देखते ही नेत्र उस में गड जाते थे। स्पर्श सुखकर, रूप मनोहर था। नीचे की भूमि सोना, मणि और रत्नों की बनी थी। उस का शिखर अनेक तहरके पांचवर्ण वाले घण्टा और पताकाओं से मंडित था। सफेद किरण रूप कवच को धारण कर रहा था, लिपा पुता था। घिसे हुए ताजे गोशीर्ष (मलियागिरि चंदन) और रक्तचंदनके छापे (हाथे) लगे हुए थे। दरवाजे पर मांगलिक कलश स्थापन किये गए थे। चन्दन लिप्त घट, तोरण और प्रतिद्वारों पर स्थापित किए थे। नीचे से ऊपर तक लम्बी चौडी फूलों की मालाए लटकी हुई थीं। पांच वर्णों के ताजे सुगन्धित फूलों के ढेर लगे थे। कृष्णागर चीड लोबान और दशांगधूप की लहराती हुई सुगन्ध से युक्त-उत्तमोत्तम सुगन्धि से सुगन्धित, अतएव गन्धकी गोली जैसा किया गया था। उस भवन को देखते ही चित्त प्रसन्न हो जाता था। उसे देखने में नेत्रों को कुछ श्रम न पडता था, और देखने वाले को भिन्नभिन्न रूप दिखाई देते थे। मतलब यह कि- वह भवन अत्यन्त मनोहर था ॥४०॥

मूलम्—*तए णं तं सुबाहुकुमारं अम्मापियरो अन्नया कया वि सोभणंसि तिहिकरणदिवसनक्खत्तमुहुत्तंमि ण्हायं कयबलिकम्मं कयकोउयमंगलपायच्छित्तं सव्वालंकारविभूसियं पमक्खणगण्हाणगीयवाइयपसाहणट्ठंगतिलगकंकणअविहवबहुउवणीयं मंगलसुजंपिएहि य वरकोउयमंगलोवयारकयसंतिकम्मं सरिसियाणं सरित्तयाणं सरिव्वयाणं सरिसलावन्नरूवजोव्वणगुणोववेयाणं सरिसेएहिंतो राय-

* भगवती शतक ११ उद्देश ११ सूत्र ४३० प ५४६ पृ १ प १ १ ज्ञाता अ १ सू० २० पत्र ३९ पृ १ प ४से६ तक।

कुलेहिंतो आणीइल्लियाणं पसाहणटुंगअविहववहुओवयणमंगलसुजंपियाहिं पुप्फचूलापामोक्खाहिं पंचसयाहिं रायवरकण्णयाहिं सिद्धिं एगंदिवसेणं पाणिं गिण्हाविंसु। तते णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स अम्मापियरो अयमेयारूवं पीइदाणं दलयंति।

तंजहा— पंचसयहिरणकोडीओ पंचसयसुवन्नकोडीओ पंचसयमउडे मउडप्पवरे पंचसयकुंडलजुए कुंडलजुयप्पवरे पंचसयहारे हारप्पवरे पणसयअद्धहारे अद्धहारप्पवरे पणसयएगावलीओ एगावलिप्पवराओ एवं मुत्तावलीओ एवं कणगावलीओ एवं रयणावलीओ पंचसयकडगजोए कडगजोयप्पवरे एवं तुडियजोए पणसयखोमजुवलाइं खोमजुवलप्पवराइं एवं वडगजुवलाइं एवं पट्टजुवलाइं एवं दुगुल्लजुवलाइं पणसयसिरीओ पणसयहिरीओ एवं धितीओ कित्तीओ बुद्धीओ लच्छीओ पणसयनन्दाइं पणसयभद्दाइं पणसयतले तलप्पवरे सव्वरयणामए णियगवरभवणकेऊ पणसयज्झए झयप्पवरे पणसयवए वयप्पवरे दसगोसाहस्सिएणं वएणं पणसयनाडगाइं नाडगप्पवराइं बत्तीसयद्धेणं नाडएणं पणसयआसे आसप्पवरे सव्वरयणामए सिरिघरपडिरूवए पणसयहत्थी हत्थिप्पवरे सव्वरयणामए सिरिघरपडिरूवए पणसयजाणाइं जाणप्पवराइं पणसयजुग्गाइं जुग्गप्पवराइं एवं सिवियाओ एवं संदमाणीओ एवं गिल्लीओ थिल्लीओ पणसयवियडजाणाइं वियडजाणप्पवराइं पणसयरहे पारिजाणिए पणसयरहे संगामिए पणसयआसे आसप्पवरे पणसयहत्थी हत्थिप्पवरे पणसयगामे गामप्पवरे

२ भगवती चालू

दसकुलसाहस्सिएणं गामेणं पणासयदासे दासप्पवरे एवं चेव दासीओ एवं किंकरे एवं कंचुइज्जे एवं वरिसधरे एवं महत्तरए पणसयसोवन्निए ओलंबणदीवे पणसयरुप्पामए ओलंबण-दीवे पणसयसुवन्नरुप्पामए ओलंबणदीवे पणसयसोवन्निए उक्कंचणदीवे एवं चेव तिन्निवि, पणसयसोवन्निए पंजरदीवे एवं चेव तिन्निवि, पणसयसोवन्निए थाले पणसयरुप्पामए थाले पणासयसुवन्नरुप्पामए थाले पणासयसोवन्नियाओ पत्तीओ पणसयरुप्पामयाओ पत्तीओ पणसयसुवन्नरुप्पामयाओ पत्ती-ओ पणासयसोवन्नियाइं थासगाइं पणसयरुप्पामयाइं थासगा-इं पणासयसुवन्नरुप्पामयाइं थासगाइं पणासयसोवन्नियाइं मल्लगाइं पणसयरुप्पामयाइं मल्लगाइं पणसयसुवन्नरुप्पाम-याइं मल्लगाइं पणासयसोवन्नियाओ तलियाओ पणसयरुप्पा-मयाओ तलियाओ पणसयसुवन्नरुप्पामयाओ तलियाओ पणासयसोवन्नियाओ कइवियाओ पणासयरुप्पामयाओ कइवियाओ पणसयसुवन्नरुप्पामयाओ कइवियाओ पणासय-सोवन्निए अवएडए पणसयरुप्पामए अवएडए पणसयसुवन्न-रुप्पामए अवएडए पणसयसोवण्णियाओ अवयक्काओ पणसयरुप्पामयाओ अवयक्काओ पणसयसुवण्णरुप्पामयाओ अवयक्काओ, पणासयसोवण्णिए पायपीढए पणसयरुप्पामए पायपीढए पणसयसुवण्णरुप्पामए पायपीढए, पणसयसोव-ण्णियाओ भिसियाओ पणसयरुप्पामयाओ भिसियाओ पणासयसुवण्णरुप्पामयाओ भिसियाओ पणासयसोवण्णि-याओ करोडियाओ पणसयरुप्पामयाओ करोडियाओ पणसयसुवण्णरुप्पामयाओ करोडियाओ, पणसयसोवण्णिए पल्लंके, पणासयरुप्पामए पल्लंके पणसयसुवण्णरुप्पामए प-

ल्लंके, पणासयसोवण्णियाओ पडिसेज्जाओ पणासयरुप्पामयाओ पडिसेज्जाओ पणासयसुवण्णरुप्पामयाओ पडिसेज्जाओ, पणासयहंसासणाइं पणासयकोंचासणाइं एवं गरुलासणाइं उन्नयासणाइं पणयासणाइं दीहासणाइं भद्दासणाइं पक्खासणाइं मगरासणाइं पणासयपउमासणाइं पणासयदिसासोवत्थियासणाइं पणासयतेल्लसमुग्गे जहा रायपसेणिज्जे जाव पणासयसरिसवसमुग्गे पणासयखुज्जाओ जहा उववाइए जाव पणासयपारिसीओ पणासयछत्ते पणासयछत्तधारीओ चेडीओ पणासयचामराओ पणासयचामरधारीओ चेडीओ पणासयतालियंटे पणासयतालियंटधारीओ चेडीओ पणासयकरोडियाधारीओ चेडीओ पणासयखीरधाईओ जाव पणासयअंकधाईओ पणासयअंगमद्दियाओ पणासयउम्मद्दियाओ पणासयण्हावियाओ पणासयपसाहियाओ पणासयवण्णगपेसीओ पणासयचुन्नगपेसीओ पणासयकोडागारीओ पणासयदवकारीओ पणासयउवत्थाणियाओ पणासयनाडइज्जाओ पणासयकोडुंबिणीओ पणासयमहाणसिणीओ पणासयभंडागारिणीओ पणासयअज्झाधारिणीओ पणासयपुप्फधारिणीओ पणासयपाणिअधारिणीओ पणासयबलिकारियाओ पणासयसेज्जाकारियाओ पणासयअब्भिंतरियाओ पडिहारीओ पणासयबाहिरपडिहारीओ पणासयमालाकारीओ पणासयपेसणकारीओ अण्णं वा सुबहुं हिरण्णं वा सुवण्णं वा कंसं वा दूसं वा विउलधणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणसंतसारसावइज्जं अलाहि जाव आसत्तमाओ कुलवंसाओ पकामं दाउं पकामं परिभोत्तुं पकामं परिभाएउं ॥४१॥

भावार्थ— इसके बाद (सुबाहुकुमारके) माता पिताने शुभ तिथि शुभ करण शुभ दिन शुभ नक्षत्र और शुभ मुहूर्तमे सुबाहुकुमारको, जो कि स्नान कर चुका था। देव पूजा कर चुका था। मागलिक तिलक आदि किये हुए था। सब अलँकारों से भूषित था। सुहागिन स्त्रियों से मर्दन (मालिश) स्नान, गीत वादित्र मडन और आठों अगों पर तिलक लगवाया तथा कंकण बधाया, मागलिक वचन बोलकर प्रधान कौतुक, मगलोपचार और शान्तिकर्म किया। फिर एक-सरीखी, समान त्वचावाली, समान वय वाली, समान रूप लावण्य और यौवन वाली, विनीत, कौतुक मगल प्रायश्चित्त कर लिया है जिन्हों ने ऐसी, समान राजकुलों से बुलाई गई, 'पुष्पचूला' वगैरह उन पाच सौ राजकन्याओं को, सुहागिनी स्त्रियों से आठो अगो मे भूषण पहनाकर और मागलिक गान पूर्वक, उन कन्याओ के साथ एक ही दिन पाणि-ग्रहण (विवाह) करा दिया, पश्चात् सुबाहुकुमार के माता पिता ने नीचे लिखा हुआ दान प्रम पूर्वक दिया, वह इस प्रकार है—

पाच सौ चादी के सिक्के, पाच सौ सोने के सिक्के, पाच सौ मुकुट, पाच सौ उत्तम मुकुट, पाच सौ कुडलो के जोडे, पाच सौ उत्तम कुडलो के जोड़े, पाच सौ हार, पाच सौ उत्तम हार, पाच सौ अर्द्धहार, पाच सौ उत्तम अर्द्धहार, पाच सौ एकावली हार पाच सौ उत्तम एकावली हार, पाच सौ मुक्तावली हार, पाच सौ उत्तम मुक्तावली हार, पाच सौ कनकावली हार, पाच सौ उत्तम कनकावली हार, पाच सौ रत्नावली हार, पाच सौ उत्तम रत्नावली हार, पाच सौ जोडे कडे, पाच सौ उत्तम जोडे कड़े, पाच सौ जोडे भुजबन्ध, पाच सौ जोडे उत्तम भुजबन्ध, इसी तरह अलसी के वस्त्र युगल, टसर के वस्त्र युगल, पाच सौ पट्टसूत्र के युगल, पाच सौ दुकूल, पाच सौ श्रीदेवी की प्रतिमाए, पाच सौ ह्रीदेवी की प्रतिमाए, पाच सौ धृतिदेवी की प्रतिमाए, पाच सौ कीर्तिदेवी की प्रतिमाए, पाच सौ बुद्धिदेवी की प्रतिमाए, पाच सौ लक्ष्मीदेवी की प्रतिमाए,

पाच सौ भद्रासन, पाच सौ भद्रासन, पाच सौ तालवृक्ष, पाच सौ उत्तम रत्नों से जड़े हुए ताल वृक्ष.(ये आसनादि सब रत्नों से जड़े हुए थे)अपने अपने प्रधान घरों के लिए पाच सौ पताकाए, पाच सौ साधारण ध्वजाए पाच सौ गोकुल, पाच सौ उत्तम गोकुल, दश दश हजार गायों का एक गोकुल होता है। बत्तीस बत्तीस पात्र वाले पाच सौ साधारण नाटक और पाच सौ उत्तम नाटक, पाच सौ साधारण घोड़े, पाच सौ बढ़िया घोड़े, सर्वरत्नमय लक्ष्मी के भंडार सरीखे पाच २ सौ साधारण और उत्तम हाथी, सर्वरत्नमय लक्ष्मी के भंडार जैसे पाच सौ साधारण और प्रधान सवारी (गाड़ी आदि), पाच सौ उत्तम तामझाम इसी तरह पालकी स्यन्दमानी (विशेष पालकी) हाथी का होदा, और दो घोड़े की बग्घी, पाच पाच सौ साधारण और उत्तम विकट-यान (बिना छत की सवारी) पाच सौ रथ क्रीड़ा आदि के लिए, पाच सौ रथ संग्राम के लिए (युद्ध के लिए), पाच २ सौ साधारण और श्रेष्ठ घोड़े, पाच २ सौ साधारण और श्रेष्ठ हाथी,एक एक गाव के आधीन दस दस हजार गाव ऐसे पाच सौ साधारण ग्राम, पाच सौ उत्तम ग्राम, पाच सौ साधारण और पाच सौ प्रधान दास, इसी तरह दासियाँ, किंकर कंचुकी (अन्त पुर का चपरासी) वर्षधर (ख्वाजा-से नपुसक जो अन्त पुर मे कार्य करते हैं) महत्तर अन्त पुर का काम-काज करने वाले, पाच सौ सोनेकी साकलवाले दीपक, पाचसौ चांदीकी साकल वाले दीपक, पाच सौ सुवर्णरूप्यमय साकल के दीपक, पाच सौ सोने की समाई (दीवट) पाच सौ चांदी और पाच सौ चांदी-सोने के दीवट, पाच २ सौ सोने चांदी और सोने- चांदी के लालटेन वाले दीपक, पाच २ सौ सोने, चांदी और सोने-चांदी के बने हुए दीपक, पाच सौ सोने के थाल, पाच सौ चांदी के थाल, पाच सौ सुवर्ण-चांदी के थाल, पाच सौ सोने के परात, पाच सौ चांदी के परात, पाच सौ सोने-चांदी के परात, पाच सौ सोने के तासक, पाच सौ चांदी

के तासक, पाच सौ सोने- चादी के तासक, पाच सौ सोने के कटोरे, पाच सौ चादी के कटोरे, पाच सौ सोने-चादी के कटोरे, पाच सौ सोने के चमचे, पाच सौ चादी के चमचे, पाच सौ सोने-चादी के चमचे, पाच सौ सोने के पीकदान, पाच सौ चादी के पीकदान, पाच सौ सोने-चादी के पीकदान, पाच सौ सोने के तापिकाहस्त (खुरपे), पाच सौ चादी के तापिकाहस्त, पाच सौ सोने- चादी के तापिकाहस्त, पाच सौ सोने के अवपाक्य (तवा) पाच सौ चादी के अवपाक्य, पाच सौ सुवर्ण-रूप्यमय अवपाक्य, पाच२ सौ सोने, चादी और सोनाचादी के बाजोट, तीनों तरह के पाच २ सौ आसन- विशेष, तीनो तरह के पाच पाच सौ पानदान, अथवा कुटा, तीनो तरह के पाच पाच सौ पलग, तीनो तरह के पाच पाच सौ प्रतिशय्याए (छोटे पलग) पाच सौ हसादिक के आकार के आसन, पाच सौ क्रौंचासन, पाच सौ गरुडासन, पाच सौ उन्नतासन, पाच सौ पनकासन, पाच सौ दीर्घासन, पाच सौ भद्रासन, पाच सौ पक्षासन, पाच सौ मकरासन, पाच सौ पद्मासन, पाच सौ दिशा सौवस्तिकासन (दक्षिणावर्त्त स्वस्तिक के आकार वाले आसन) पाच सौ तेल के वर्तन । इनके सिवाय रायपसेणी सूत्र मे कहे नरमों रखने के वर्तन तक सब चीजे, पाच सौ कुबडी दासिया, इन के सिवाय औपपातिक सूत्र में कही हुई पाच सौ पारसी दासियों तक, पाच सौ छत्र, पाच सौ छत्र धारनवाली दासिया, पाच सौ चॅवर, पाच सौ चॅवर ढोरन वाली दासिया, पाच सौ पखे, पाच सौ पखे झलने वाली दासिया, पाच सौ पानदान उठानेवाली दासिया, पाच सौ धाए, यावत् पाच सौ गोद में खेलाने वाली धाए, पाच सौ अग को मलने वाली दासिया, पाच सौ मर्दन करने वाली दासिया, पाच सौ स्नान कराने वाली दासिया, पाच सौ शृंगार कराने वाली दासिया, पाच सौ चन्दन आदि को पीसने वाली, पाच सौ चूर्ण (ताम्बूल-पान का मसाला अथवा सुगंधि द्रव्य) पीसने वाली, पाच सौ क्रीडा करानेवाली,

पाच सौ मनोरञ्जन करने वाली, पाच सौ राजसभा के समय साथ रहने वाली, पाच सौ नाटक सम्बन्धिनी पाच सौ किङ्करा (चपरासिन), पाच सौ रसोई बनाने वाली, पाच सौ भंडार की रखवाली (देखभाल) करने वाली, पाच सौ बालकों को खिलाने वाली, पाच सौ फलों के बगीचों की रख-वाली करने वाली, पाच सौ जलघर की रक्षा करने वाली, पाच सौ पूजा करनेवाली पाच सौ सेज (बिछौना) बिछाने वाली, पाच सौ अन्तःपुर की परिचारिकाएं पाच सौ बाहर की परिचारिकाएं, पाच सौ माला गूथने वाली, और पाच सौ पीसने वाली दासिया दीं। इन के सिवाय बहुतसी चांदी सोना कासा वस्त्र विपुल धन आदि विद्यमान उत्तम उत्तम चीजें दीं। वे चीजें इतनी अधिक थीं, कि यदि सब को इकट्ठा करके उन का सात पीढ़ी तक दीनों को दान दिया जाय स्वयं उपभोग किया जाय और हिस्सेदारों को भी बांटा जाय तोभी समाप्त न हों॥ ४१ ॥

मूलम्—तए णं से सुबाहुकुमारे एगमेगाए भज्जाए ए-गमेगं हिरण्णकोडिं दलयति। एगमेगं सुवण्ण-कोडिं दलय-ति। एगमेगं मउडं दलयति। एवं चेव सव्वं जाव एगमेगं पेसणकारिं दलयति। अण्णं च सुवहुं हिरण्णं जाव परिभा-एउं॥४२॥

भावार्थ— इसके पश्चात् सुबाहुकुमार ने हरएक पत्नी को एक एक करोड चांदी के और एक एक करोड सोने के सिक्के दिये। इसी तरह पीसने वाली दासियों तक सब वस्तुएं दीं तथा और भी उपभोग आदि के लिए बहुत सा सोना चांदी दे दिया॥४२॥

मूलम्— तए णं से सुबाहुकुमारे उप्पिपासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं वत्तीसतिबद्धेहिं नाडएहिं णाणा-

१ भगवती शतक ११ उ० ११ पत्र ५४१ तक

२ भगवती शतक ११ उ० ११ पत्र ५४१ । ५४२ तक।

विहवरतरुणीसंपउत्तेहि उवनच्चिज्जमाणे उवनच्चिज्जमाणे उवगिज्जमाणे उवगिज्जमाणे उवलालिज्जमाणे उवलालिज्जमाणे पाउस १ वासारत्त २ सरद ३ हेमंत ४ वसंत ५ गिम्ह ६ पज्जंते छप्पि उदु जहाविभवेणं माणमाणे माणमाणे कालं गालेमाणे गालेमाणे इट्टे सद्दफरिसरसरूवगंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे विहरति ॥४३॥

भावार्थ— अनन्तर सुबाहुकुमार ऊपर के महल मे रहता हुआ अनेक तरुणी रमणियो से युक्त तथा मृदगों की ध्वनि सहित, बत्तीस प्रकार के नाटकों में इच्छानुसार नाच और गान करता हुआ, सुहावनी २ क्रीडाएं करता हुआ रहने लगा। प्रावृट्, वर्षा, शरद, हेमन्त, वसन्त, और ग्रीष्म इन छह ऋतुओं में ऐश्वर्य के अनुसार काल को व्यतीत करता हुआ पाच प्रकार के इष्ट रूप-रस-गध स्पर्श—कामभोगों को भोगता हुआ रहने लगा ॥४३॥

मूलम्— तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे आइगरे तित्थगरे सयंसंबुद्धे पुरिसुत्तमे पुरिससीहे पुरिसवरपुंडरीए पुरिसवरगंधहत्थी अभयदए चक्खुदए मग्गदए सरणदए जीवदए दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी अप्पडिहयवरनाणदंसणधरे वियट्टच्छउमे जिणे जाणए तिन्ने तारए मुत्ते मोयगे बुद्धे बोहए सव्वन्नू सव्वदरिसी सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणरावत्तिअं सिद्धिगइनामधेज्जं ठाणं संपाविउकामे अरहा जिणे केवली सत्तहत्थुस्सेहे समचउरंससंठाणसंठिए वज्जरिसहनारायसंघयणे अणुलोमवाउवेगे कंकग्गहणी कवोयपरिणामे सउणिपोसपिट्ठंतरोरुपरिणए पउमुप्पलगंधसरिसनिस्सासस्सुरभिवयणे छवी निरायंकउत्तमपसत्थअइसेयनिरुवमपले जल्लमल्लकलंकसेयरयदोसवज्जियसरीरनिरुवलेवे छायाउज्जो-

इअंगमंगे घणनिचियसुबद्धलक्खणुण्णयकूडागारनिभपिं-
डियग्गसिरए सामलिबोंडघणनिचियच्छोडियमिउविसयप-
सत्थसुहुमलक्खणसुगंधसुंदरभुयमोयगभिंगनेलकज्जलपहि-
ट्ठभमरगणणिद्धणिकुरंबणिचियकुंचियपयाहिणावत्तमुद्धसि-
रए दाडिमपुप्फप्पगासतवणिज्जसरिसनिम्मलसुणिद्धकेसं-
तकेसभूमी घणनिचिय॰ छत्तागारुत्तमंगदेसे णिव्वणसम-
लट्ठमट्ठचंदद्धसमणिडाले उडुवइपडिपुण्णसोमवयणे अल्लीण-
पमाणजुत्तसवणे सुसवणे पीणमंसलकवोलदेसभाए आ-
णामियचावरुइलकिण्हब्भराइतणुकसिणणिद्धभमुहे अवदा-
लियपुंडरीयणयणे कोआसियधवलपत्तलच्छे गरुलायतउ-
ज्जुतुंगणासे उवचियसिलप्पवालबिंबफलसण्णिभाहरोट्ठे
पंडुरससिसयलविमलणिम्मलसंखगोखीरफेणकुंददगरय-
मुणालिआधवलदन्तसेढी अखंडदंते अप्फुडियदंते अवि-
रलदंते सुणिद्धदंते सुजायदंते एगदंतसेढी विव अणेगदंते हुय-
वहणिद्धंतधोयतत्ततवणिज्जरत्ततलतालुजीहे अवट्ठिय-
सुविभत्तचित्तमंसू मंसलसंठियपसत्थसद्दूलविउलहणू चउ-
रंगुलसुप्पमाणकंबुवरसरिसग्गीवे वरमहिसवराहसीहसद्दूल-
उसभनागवरपडिपुन्नविउलक्खंधे जुगसन्निभपीणरइयपीवर-
पउट्ठसुसंठियसुसिलिट्ठविसिट्ठघणथिरसुबद्धसंधिपुरवरफलिह-
वट्टियभुए भुअईसरविउलभोगआदाणपलिहउच्छूढदीहबाहू
रत्ततलोवइयमउअमंसलसुजायलक्खणपसत्थअच्छिद्द-
जालपाणी पीवरकोमलवरंगुली आयंबतंबतलिणसुइरुइलणि-
द्धणक्खे चंदपाणिलेहे सूरपाणिलेहे संखपाणिलेहे चक्कपा-
णिलेहे दिसासोत्थियपाणिलेहे चंदसूरसंखचक्कदिसासोत्थि-

अपागिलेहे कणगसिलातलुज्जलपसत्थसमतलउवचियवि-
च्छिण्णपिहुलवच्छे सिरिवच्छंकियवच्छे अकरंडुअकणग-
रुयगनिम्मलसुजायनिरुवहयदेहधारी अट्ठसहस्सपडिपुन्नवर-
पुरिसलक्खणधरे सण्णयपासे संगयपासे सुंदरपासे सुजा-
यपासे मियमाइअपीणरइअपासे उज्जुअसमसहियजच्चतणु-
कसिणणिद्धआइज्जलउहरमणिज्जरोमराई झसविहगसुजा-
यपीणकुच्छी झसोदरे सुइकरणे पउमवियडणाभे गंगाव-
त्तकपयाहिणावत्ततरंगभंगुररविकिरणतरुणबोहियअकोसा-
यंतपउमगंभीरवियडणाभे साहयसोणंदमुसलदप्पणणिकरि-
यवरकणगच्छरुसरिसवरवइरवलिअमज्झे पमुइयवरतुरग-
सीहवरवट्टियकडी वरतुरगसुजायसुगुज्झदेसे आइण्णहउव्व-
णिरुवलेवे वरवारणतुल्लविक्कमविलसियगई गयससणसु-
जायसन्निभोरू समुग्गणिमग्गगूढजाणू एणीकुरुविंदावत्तव-
ट्टाणुपुव्वजंघे संठियसुसिलिट्ठविसिट्ठगूढगुप्फे सुप्पइट्ठियकु-
म्मचारुचलणे अणुपुव्वसुसंहयंगुलीए उण्णयतणुतंबणिद्धण-
क्खे रत्तुप्पलपत्तमउअसुकुमालकोमलतले अट्ठसहस्सवरपुरिसलक्खणधरे न-
गनगरमगरसागरचक्ककवरंकमंगलंकियचलणे विसिट्ठरूवे
हुयवहनिद्धूमजलियतडितडियतरुणरविकिरणसरिसतेए -
अणासवे अममे अकिंचणे छिन्नसोए निरुवलेवे ववगयपेम-
रागदोसमोहे निग्गंथस्स पवयणस्स देसए सत्थनायगे पइट्ठा-
वए समणगपई समणगविंदपरिअट्टए चउत्तीसबुद्धवयणाति-
सेसपत्ते पणतीससच्चवयणातिसेसपत्ते । आगासगएणं चक्के-
णं आगासगएणं छत्तेणं आगासगयाहिं सेयवरचामराहिं आ-
गासफलिहामएणं सपायपीढेणं सीहासणेणं धम्मज्झएणं पुर-

ओ पकड्ढिज्जमाणेणं (*चउद्दसहिं समणसाहस्सीहिं छत्तीसाए अज्जियासाहस्सीहिं) सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे सुहंसुहेणं विहरमाणे हत्थिसीसे नगरे पुप्फकरंडे उज्जाणे जत्तओ पुढवीसिलापट्टए तत्तओ तहेव समोसरति ॥ ४४ ॥

भावार्थ— उस काल के उस समय भगवान् महावीर जो कि अरिहंत अवस्था में धर्म की आदि करने वाले, चार तीर्थों की स्थापना करनेवाले, स्वयंबुद्ध पुरुषोत्तम पुरुषसिंह पुरुषपुण्डरीक पुरुषवरगन्धहस्ती अभयदाता, ज्ञानदाता मोक्षमार्गदाता अशरण के शरण नयप्रदाता, संसार समुद्र में द्वीप की नाईं सहारा देने वाले, चार गतियों के आधारभूत चक्रवर्ती की तरह तीन समुद्र और हिमवान पर्वत तक धर्मचक्र चलाने वाले, निरावरण और उत्तम ज्ञान दर्शन को धारण करने वाले, छद्मस्थ (असर्वज्ञ) ता से रहित, रागद्वेष को जीतने वाले, रागद्वेष आदि के स्वरूप कारण और फल को जानने वाले संसार रूपी समुद्र से तिरने और तारने वाले स्वयं घातिया कर्मों से मुक्त और दूसरों को मुक्त करने वाले तत्त्वों के जानकार और दूसरों को ज्ञान देने वाले, सिद्ध अवस्था की अपेक्षा सर्वज्ञ और सर्वदर्शी, निरुपद्रव, निश्चल, नीरोग अनन्त, अक्षय, निराबाध जिस से वापस न आवे ऐसी सिद्धगति को प्राप्त होने वाले, इन्द्रों से पूज्य, जिन, केवली, सात हाथ लम्बे, समचतुरस्र संस्थान वाले, वज्रऋषभनाराच संहननवाले, शरीर के अन्दर की अनुकूल वायु के वेगवाले, कङ्कपक्षी की नाईं नीरोग गुदा स्थान वाले, कबूतर की तरह नीरोग जठराग्निवाले, शकुनि पक्षी की तरह मल से निर्लेप अपान (गुदा) वाले, पीठ पसवाड़े और जाँघों के विशेष (सुन्दर) आकार वाले थे। भगवान् का पद्म (सुगन्धि द्रव्यविशेष) और नीले कमल सरीखी सुगन्ध वाले निःश्वास से सुगन्धित था।

* यह पाठ टीका में नहीं है।

उन के शरीर की छवि निराली थी और त्वचा अति कोमल थी ।— उन का मांस नीरोग उत्तम सफेद और निरुपम था। उनका शरीर मैल, अशुभ तिलकादि, पसीना और धूल आदि की मलिनता से रहित अतएव निर्मल था । उनके अंगोपांग कान्ति से चमकते थे । उनके स्नायुबन्धन शुभ लक्षण वाले और इतने मजबूत थे जैसे लोहे का घन । उनका शिर ऐसा मालूम होता था, जैसे पर्वत के शिखर का पाषाणपिण्ड । उन के सिर के बाल सेमल की रुई की तरह नरम, स्वच्छ शुभ, चिकने और शुभ-लक्षणों से युक्त थे । सुगंधवाले सुन्दर भुजमोचक रत्न और भृंग (एक तरह का कीड़ा) की तरह, नील की तरह कज्जल की तरह और मदोन्मत्त भौरे की तरह काले काले दक्षिण की ओर घुमे हुए घने और घुँघरवाले थे। उनके मस्तक की त्वचा (बालों के पैदा होने की जगह) अनार के फूल या तपे हुए सोने की नाईं (लाल) निर्मल (स्वच्छ) और चिकनी थी । उनका मस्तक भरा हुआ छत्र के समान उन्नत था । ललाट घाव आदि से रहित, समान मनोज्ञ और दीप्त था, अत ऐसा मालूम होता था, मानो अर्द्धचन्द्र हो। मुख पूर्ण चन्द्रमा की तरह सौम्य था । कान सटे हुए थे—न छोटे न बड़े—प्रमाणयुक्त-थे । व बड़े भले मालूम होते थे और उनका स्निग्ध नेत्र था। उनके गाल स्थूल और मांसल (पुष्ट) थ । भौहे थोड़े नमे हुए धनुष की नाईं मनोज्ञ या काले बादल की रेखा की तरह काले और स्निग्ध थे। नेत्र खिले हुए सफेद कमल जैसे थे,अत उनके कोये विकसित कमल सरीखे उज्वल और पक्ष्म (पलक) वाले थे । नाक गरुड की तरह लम्बी सीधी और ऊंची थी नीचेका ओठ कामदार सिलारूप प्रवाल (मूंगा) और बिम्बफल सरीखा लाल था। दांतों की पंक्ति स्वच्छ चन्द्र का टुकडा, अत्यन्त निर्मल शंख, गाय के दूध के फेन कुन्द पुष्प . जल की बूँद और

* आणामियचावरुइलकिण्हाब्भराइसंठियसंगयआययसुजायभमुए । उन के भौंहे थोड़े नमे हुए धनुष की तरह सुन्दर और काले मेघकी रेखा के समान काले सुन्दर आकार के, उचित लंबे और अच्छे बने हुए थे ।

कमल के दण्ड सरीखी सफेद थी। वे दांत टूटे छिद्र (स्वर) न थे। अतिशय स्निग्ध थे। मनोहर थे और एक दांत की पंक्ति की तरह ही अनेक दांत थे (क्योंकि घन होने से एक दूसरे से अलग मालूम न पड़ते थे) तालु और जिह्वा, अग्नि से निर्मल किए हुए, पानी से धोए हुए तथा फिर अग्नि में तपाए हुए सोने की नाई लाल थी। दाढ़ी और मूँछ के बाल, न बढ़ने वाले, अलग अलग और मनोहर थे। दाढ़ी भरी हुई सुन्दर शुभ लक्षणयुक्त विस्तीर्ण और व्याघ्रकी दाढ़ीकी तरह थी। ग्रीवा (गर्दन), चार अंगुल की और उत्तम शंख जैसी थी। कंधे, महिष शूकर सिंह शार्दूल व्याघ्र बैल और गजेन्द्र सरीखे यथाप्रमाण और विस्तीर्ण थे, तथा युग (यान के खंभे) सदृश लम्बे चौड़े, मोटे और मनोहर थे। उन की कलाई भी स्थूल थी सुन्दर आकारवाली सुसङ्गत उत्तम पुष्ट स्थिर और मजबूत जोड़ वाली थी। भुजाएं नगरद्वार की आगल की तरह थीं। वे ऐसी मालूम होती थीं, जैसे किसी इष्ट पदार्थ को ग्रहण करने के लिए जाते हुए नागराज का लम्बा शरीर हो। हाथ (हथेली) उठी हुई, कोमल लाल, मांसल (पुष्ट) सुन्दर और सामुद्रिक शास्त्र के शुभ चिन्हों से युक्त थे। अंगुलियों के बीच में छेद नहीं पड़ते थे। अंगुलियाँ स्थूल कोमल और सुन्दर थीं। अंगुलियों के नख, तांबे की तरह कुछ कुछ लाल पतले पवित्र चमकीले और चिकने थे। हाथ की रेखाएं चन्द्रमा जैसे आकार वाली सूरज जैसे आकार वाली शंख जैसे आकार वाली और चक्र के आकार की तथा दाहिने और घुमे हुए साथिया के आकार वाली थीं। चन्द्र, सूर्य शंख, चक्र दिशा के आकार की और दक्षिणावर्त साथिया के आकार की रेखाएं थीं। वक्षस्थल, सोने की शिला के समान उज्ज्वल शुभ, समतल मांसल (पुष्ट) विस्तीर्ण और अत्यन्त विशाल था। श्रीवत्स के चिन्ह से

---

* पूर्वोक्त विषय को अधिक उत्कृष्ट दिखाने के लिए दुहराया गया है।

शोभित था। उन का देह मांसल (भराहुआ) था, अतः पीठ की हड्डी दिखाई न देती थी। सोने की सी कान्ति वाला था। सुन्दर और रोगादि से रहित था। पुरुष के सम्पूर्ण १००८ लक्षणों से युक्त था। पसवाड़े क्रमशः पतले होते गये थे। शरीर के प्रमाण के अनुसार ही पसवाड़े थे। इसीलिए वे सुन्दर और मनोहर थे तथा अच्छे परिमाण वाले मोटे और और सुन्दर थे। रोमराजि, सीधी विषमता रहित घनी पतली काली स्निग्ध दर्शनीय लावण्य वाली और रमणीय थी, कुक्ष, झष (मछली) और पक्षी की तरह सुन्दर भरी पूरी थी। उदर (पेट) मच्छ की तरह था। पांचों इन्द्रियां पवित्र थीं। नाभि, कमल की तरह विकसित थी। तथा गंगा के भँवर की तरह मधुर तथा तरुण (दोपहर के) सूर्य से विकसित होनेवाले कमल की नाई गम्भीर और विशाल थी। मध्यभाग, त्रिकाष्ठिका (तिकठी) मुसल, दर्पण पकड़ने के काष्ठ तथा शुद्ध किए हुए सोने की तलवार की मूठ की तरह पतला थी और उत्तम वज्र के मध्यभाग की तरह वली हुई थी। अर्थात् जिस तरह तिकठी (तिपाई) के ऊपर का भाग मूसल के बीच का भाग, दर्पण पकड़ने का काठ, तलवार की मूठ का मध्यभाग पतला होता है, उसी तरह भगवान का मध्यभाग (कमर) पतला था और वज्र की तरह उभरा हुआ था। कमर, नीरोग घोड़े और श्रेष्ठ शेर की कमर सरीखा गोल था। गुह्य देश, घोड़े के गुह्य देश की तरह सुजात (सुन्दर) था। जात्यश्व (उत्तम अश्व) की तरह उनका शरीर मल मूत्र आदि से रहित था। गजराज की तरह पराक्रम और विलास पूर्ण गमन था। जांघ हाथी की सूंड की तरह पुष्ट थी। घुटने, मांस से भरे हुए होने के कारण ऐसे मिले हुए थे, जैसे अनाज भरने की कोठी और उसका ढक्कन आपस में मिला रहता है। पिंडली हरिणी की पिंडली और कुरुविन्द (तृण विशेष) की तरह नीचे२ क्रमसे पतली होती गई थी। घुटिकाएँ सुन्दर आकार वाली, उत्तम और मांसल होने से गूढ थीं। चरण, सुन्दर और कछुवे के समान

उन्नत थे। अंगुलियां यथायोग्य छोटी बड़ी और एक दूसरी से मिली हुई थीं। पैर के नख, उन्नत पतले तांबे के जैसे कुछ२ लाल और चिकने थे। तलुवे, लाल कमल के पत्ते सरीखे कोमल और सुन्दर थे। शरीर १००८ पुरुषों के शुभ लक्षणोंसे युक्त था। चरण नग (पर्वत) नगर मगर सागर चक्र का पहिया और इन के अतिरिक्त श्रेष्ठ तथा मांगलिक चिन्हों से अंकित थे। विशिष्ट रूपवाले थे। उनका तेज, धुआं रहित अग्नि, बिजली और दो पहर के सूर्य की नाईं दीप्त था। उनको कर्म का आ-स्रव नहीं होता था। ममता रहित थे। अकिंचन (परिग्रह रहित) थे। शोक शून्य थे। द्रव्य और भाव परिग्रहसे रहित थे। प्रेम (आसक्तिराग) राग (विषयानुराग) द्वेष और मोह से रहित थे। निर्ग्रन्थ प्रवचन (आ-गम) के उपदेशक थे। उपदेशकों के नायक और उनकी स्थापना करने वाले थे। साधु सबके अधिपति और साधुओं के समूहोंको बढ़ाने वाले थे। तीर्थङ्करके वचनादि चौंतीस अतिशयों से और पैंतीस सत्य वचन के अतिशयों से युक्त थे। भगवान्के आगे आगे धर्मचक्र आकाश में चलता था। तीन छत्र आकाश में भगवान् के ऊपर रहते थे। आकाश में दो चलियां सफेद चँवर ढुलते थे। आकाश की तरह स्वच्छ स्फटिक के सिंहासन पर बैठे हुए थे। धर्मध्वजा (इन्द्रध्वजा) को देवलोग आगे आगे ले जा रहे थे। चौदह हजार साधु और छत्तीस हजार साध्वियोंसे घिरे हुए क्रमसे (आगे पीछे) चलते हुए ग्रामानुग्राम (एक ग्राममें दूसरे ग्राम) जाते हुए, आनन्दके साथ विहार करते हुए हस्तिशीर्ष नगर में पूर्वोक्त पुष्पकरण्ड उद्यान में पूर्व-वर्णित पृथ्वीशिला पट्ट जहां था, वहां समवसरण सहित पधारे ॥४४॥

मूलम्— परिसा निग्गया अदीणसत्तू जहा कोणिए तहेव निग्गते। जहा उववाइए, जाव तिविहाए पज्जुवास-

णाए पज्जुवासति । तए णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स तं महया जणसद्दं वा जाव जणसन्निवायं वा सुणमाणस्स वा पासमाणस्स वा अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था किण्णं अज्ज हत्थिसीसे नगरे इन्दमहेइ वा खंदमहेइ वा मुगुंदमहेइ वा णागमहेइ वा जक्खमहेइ वा भूयमहेइ वा कूवमहेइ वा तडागमहेइ वा नईमहेइ वा दहमहेइ वा पव्वयमहेइ वा रुक्खमहेइ वा चेइयमहेइ वा थूभमहेइ वा जणं एए बहवे उग्गा भोगा राइन्ना इक्खागा णाया कोरव्वा खत्तिया खत्तियपुत्ता भडा भडपुत्ता सेणावई पसत्थारो लेच्छइ माहणा इब्भा,जहा उववाइए जाव सत्थवाहप्पभितिए ण्हाया कयबलिकम्मा जाव निग्गच्छंति,एवं संपेहेति एवं संपेहेत्ता कंचुइज्जपुरिसं सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी, किं णं देवाणुप्पिया! अज्ज हत्थिसीसे नगरे इंदमहेइ वा जाव निग्गच्छंति? तए णं से कंचुइज्जपुरिसे सुबाहुणा कुमारेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे समणस्स भगवओ महावीरस्स आगमणगहियविणिच्छिए करयल० सुबाहुकुमारं जएणं विजएणं वद्धावेइ, वद्धावेत्ता एवं वयासी, णो खलु देवाणुप्पिया! अज्ज हत्थिसीसे नगरे इंदमहेइ वा जाव निग्गच्छति । एवं खलु देवाणुप्पिया! अज्ज समणे भगवं महावीरे जाव सव्वन्नू सव्वदरिसी हत्थिसीसस्स नगरस्स बहिया पुप्फकरंडे चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उगिण्हित्ता णं जाव विहरति ॥४५॥

भावार्थ— जनसमूह भगवानको वन्दना करनेके लिये निकला । अदीनशत्रु राजा भी महाराज कोणिक की तरह निकला । औपपातिक (उववाई) सूत्र के अनुसार (यावत) मन वचन और काय इन तीन प्रकारों

१भग० श० ६ उ० ३३ आ० स० पत्र ४६१-९१ प से ।

में उदासीनता थी। उसी समय सुबाहुकुमारने जोरदार मनुष्यों के शब्द (यावत्) बहुत कोलाहल सुनकर उन्हें देखकर उसके मन में इस प्रकार संकल्प पैदा हुआ। आज हस्तिशीर्ष नगर में क्या इन्द्रमहोत्सव है? या कार्तिकेय-महोत्सव है? या वासुदेव अथवा बलदेवका उत्सव है? या नाग-कुमार का उत्सव है? या यक्ष का महोत्सव है? या भूतों (व्यन्तरों की एक विशेष) का महोत्सव है? या कूप महोत्सव है? या तालाब महोत्सव है? या नदी महोत्सव है? या द्रह (कुण्ड) महोत्सव है? या पर्वत महोत्सव है? या वृक्ष महोत्सव है? या चैत्य महोत्सव है? या स्तूप (स्तंभ) महोत्सव है? जिसमें कि ये बहुतसे उग्रवंशीय, भोगवंशीय, राजन्यवंशीय, इक्ष्वाकुवंशीय, ज्ञातवंशीय, कुरुवंशीय, क्षत्रिय, क्षत्रियपुत्र, सुभट, सुभटपुत्र, सेनापति, धर्मशास्त्र के पाठक, लेच्छकी (राजविशेष) ब्राह्मण, इभ्य, (इसके सिवाय उववाई में कहे अनुसार यावत्) श्री सार्थवाह आदि, ये सब लोग स्नान करके कुलदेवता की पूजा कर के (यावत्) निकल रहे हैं। सुबाहुकुमारने इस तरह विचार कर कंचुकी (अन्तःपुर रक्षक की देखभाल करने वाले) को बुलाया। बुलाकर बोला--- हे देवानुप्रिय! आज हस्तिशीर्ष नगरमें क्या इन्द्रादिका महोत्सव है? जिसमें कि (यावत्) लोग बाहर निकल रहे हैं। तब वह कंचुकी सुबाहुकुमारकी बात सुनकर प्रसन्न हुआ। और श्रमण भगवान् महावीरके आगमन का निश्चय कर के हाथ जोड़कर, 'जय हो' 'विजय हो' कहकर बधाई देने लगा। बधाई देकर इस प्रकार बोला, हे स्वामिन्! आज हस्तिशीर्ष नगरमें इन्द्रादि महोत्सव नहीं है (यावत्) लोग बाहर निकल रहे हैं। हे देवानुप्रिय! आज श्रमण भगवान् महावीर (यावत्) सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, हस्तिशीर्ष नगर के बाहर पुष्पकरण्ड चैत्य में यथायोग्य, अभिग्रहको ग्रहण करके (यावत्) विहार कर रहे हैं ॥४५॥

मूलम्— तएणं एए बहवे उग्गा भोगा जाव अप्पेगइ-या वंदणवत्तियं अप्पेगइया पूयणवत्तियं एवं सक्कारवत्तियं सम्माणवत्तियं दंसणवत्तियं कोऊहलवत्तियं अप्पेगइया अत्थविणिच्छयहेउं अस्सुयाइं सुणिस्सामो सुयाइ निस्संकियाइं करिस्सामो। अप्पेगइआ अट्ठाइं हेऊइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छिस्सामो, अप्पेगइआ सव्वओ समंता मुंडे भवित्ता, अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामो, अप्पेगइया पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामो। अप्पेगइआ जिणभत्तिरागेण अप्पेगइया जीअमेयंति कट्टु-ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता सिरसाकंठे मालाकडा आविद्धमणिसुवण्णा कप्पियहारद्धहारतिसरयपा-लंबपलंबमाणकडिसुत्तसुकयसोहाभरणा पवरवत्थपरिहिया चंदणोलित्तगायसरीरा अप्पेगइया हयगया एवं गयगया रहगया सिवियागया संदमाणियागया अप्पेगइया पायविहार चारेणं पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ता महया उक्किट्ठसीहणाय-बोलकलकलरवेणं पक्खुभियमहासमुद्दरवभूतं पि व करे-माणा हत्थिसीसस्स नगरस्स मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छंति।

तए णं से सुबाहु कुमारे कंचुइज्जपुरिसस्स अंतिए एयमट्ठं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठ० कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ। सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह। उवट्ठवेत्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा सुबाहुकुमारे णं एवं वुत्ता समाणा जाव पच्चप्पिणंति॥४६॥

१ भगवती श ६ उ ३३ प ४६१ पृ २ प ११ तक
२ उव सूत्र २७ वां प ५८ पृ. १ प १४ से
३ भग० श. ६ उ ३३ प ४६१-१ प ११ से

भावार्थ— इसीलिए ये कोई २ उग्रकुल के भागवतके (यावत्) लोग वन्दना के लिए, कोई एक पूजा करने के लिए एवं सत्कार करने के लिए, सन्मान करने के लिए, दर्शन के लिए, कौतूहल के लिए, सूत्रों के अर्थ का निश्चय करने के लिए, नहीं सुने को सुनने और सुने हुए का सन्देह दूर करने के लिए, कोई अर्थ (जीवादितत्त्व) हेतु, कारण और शङ्का समाधान सम्बन्धी प्रश्न पूछने के लिए, कोई सब प्रकार मुंडित (द्रव्य की अपेक्षा केशों को अलग करना भाव की अपेक्षा कषायादि से अलग) होकर गृहस्थ से साधु होने के लिए कोई पञ्चाणुव्रत और सात शिक्षाव्रत (३ गुण व्रत और ४ शिक्षाव्रत) इस प्रकार बारह तरह के गृहस्थधर्म को अंगीकार करने के लिए, कोई जिनेन्द्र भगवान् की भक्ति से प्रेम होने से, कोई जीत (परम्परागत हमारा आचार) है इस प्रकार सोच करके स्नान कर, गृहदेवता की पूजा कर, तिलक आदि कौतुक और मांगलिक दही अक्षत आदि प्रायश्चित्त से पवित्र होकर, मस्तक और कंठ में मालाएं धारण करके, मणि और सोने के गहने पहिन कर तथा लटकते हुए लम्बे हार, अर्द्ध-हार, तिलड़ा हार सुन्दर २ लम्बे लटकते हुए गुच्छोंवाली करधनी आदि सुन्दर २ आभूषण पहनकर, बढ़िया बढ़िया वस्त्र पहिन कर, चन्दन का शरीर पर लेप कर, कोई घोड़े पर सवार होकर, कोई हाथी पर सवार होकर, कोई रथ पर सवार होकर, कोई पालखी पर सवार होकर, कोई स्यंदमान (पुरुषाकार सवारी विशेष) पर सवार होकर कोई पैदल चलते हुए पुरुषों के समूह के समूह तुमुल हर्षध्वनि सिंहनाद बोल (अव्यक्तशब्द) या कलकल (व्यक्त) शब्द से क्षोभित समुद्र के तीव्र शब्द की नाईं नगर को क्षोभित करते हुए, हस्तिशीर्ष नगर के बीचोंबीच होकर निकल रहे हैं। सुबाहुकुमार कंचुकी से यह बात सुनकर हर्ष से सन्तुष्ट हुआ। फिर अपने सेवकों को बुलाया। बुलाकर बोला—भो देवानुप्रिय! चारघंटों वाले घोड़ों के रथ को शीघ्र ही लाओ। लाकर मुझे सूचित करो। सुबाहुकुमार के यह कहने

पर सेवकों ने रथ लाकर उन्हें सूचित किया ॥४६॥

मूलम्— तए णं से सुबाहुकुमारे जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छति। उवागच्छित्ता ण्हाए कयबलिकम्मे जहा उववाइए परिसावन्नओ तहा भाणियव्वं जाव चंदणोवलित्तगायसरीरे सव्वालंकारविभूसिए मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ, मज्जणघराओ पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ। चाउग्घंटं आसरहं दुरूहित्ता सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धारिज्जमाणे णं महया भडचडकरपहकरवंदपरिक्खित्ते हत्थिसीसं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ। निग्गच्छित्ता जेणेव पुप्फकरंडे चेइए, तेणेव उवागच्छइ। तेणेव उवागच्छित्ता तुरए निगिण्हेइ। तुरए निगिण्हित्ता रहं ठवेति। रहं ठवेत्ता रहाओ पच्चोरुहति। रहाओ पच्चोरुहित्ता पुप्फतंबोलाउहमादियं वाणहाओ य विसज्जति। विसज्जित्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ। उत्तरासंगं करेत्ता आयंते चोक्खे परमसुइब्भूए अंजलिमउलियहत्थे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ। आयाहिणपयाहिणं करेत्ता तिक्खुत्तो २ जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ ॥४७॥

भावार्थ— तब वह सुबाहुकुमार स्नान घर की तरफ चला आया। वहा आकर स्नान किया। गृहदेवता की पूजा की (परिषद–सभा का वर्णन उववाई सूत्र के अनुसार जान लेना चाहिए) यावत् चन्दन का शरीर पर लेप किया। समस्त अलकारों से भूषित हुआ, और स्नानागार से निकला। निकलकर जहाँ बाहर सभाभवन और चार घंटों वाला घोडो का रथ था, वहाँ

आया। वहाँ आकर रथ पर चढा। चढकर, कोरंट के फूलों से शोभित मालाओं के छत्र को धारण करके बहुत से सुभट और चारणों के समूह से घिरा हुआ हस्तिशीर्ष नगर के बीचोबीच होकर निकला। निकलकर जहाँ पुष्पकरण्डक चैत्य था, वहां आया। आकर घोडों को रोक कर, रथ ठहराया। रथ ठहरा कर रथ से उतरा। उतर कर पुष्प, ताम्बूल अस्त्र शस्त्र और जूते वगैरह को वहा छोड दिया। छोड करे एक दुपट्टा डाला। कुल्ले किये, और परम पवित्र होकर अञ्जलि करके (दोनों हाथ जोड कर) श्रमण भगवान् महावीर के निकट आया। आकर, श्रमण भगवान महावीर की दक्षिण दिशा से आरम्भ करके तीन प्रदक्षिणाएं की। प्रदक्षिणा करके यावत् भगवान् की मन वचन काय से उपासना की॥ ४७॥

मूलम्—तए णं समणे भगवं महावीरे सुबाहुस्स कुमारस्स तीसे य महति महालियाए इसिजाव धम्मकहा जाव परिसा पडिगया। तए णं से सुबाहुकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे जाव हियए उट्ठाए उट्ठेति, उट्ठाए उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी-सद्दहामि णं भंते निग्गंथं पावयणं, पत्तियामि णं भंते णिग्गंथं पावयणं, रोएमि णं भंते णिग्गंथं पावयणं अब्भुट्ठेमि णं भंते णिग्गंथं पावयणं, एवमेयं भंते, तहमेयं भंते, अवितहमेयं भंते, असंदिद्धमेयं भंते, जाव से जहेयं तुब्भे वदहत्ति कट्टु एवं वयासी-जहा णं देवाणुप्पियाणं अंतिए बहवे उग्गा उग्गपुत्ता एवं दुप्पडियारे णं भोगा राइण्णा इक्खागा नाया कोरव्वा खत्तिया माहणा भडा जोहा पसत्थारो मल्लई लेच्छई पुत्ता अण्णे य बहवे राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियइब्भसेट्ठिसेणावइसत्थवाह -

१ भगवती श० ९ उ० ३३ पृ० ४८०—२ प० २ नक।

पभितिओ मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइया, अहं अहण्णे नो संचाएमि जाव पव्वइयए। अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए पंचाणुव्वयं सत्तसिक्खावयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामि। अहासुहं मा पडिबंधं करेह। तए णं से सुबाहुकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए पंचाणुव्वयं सत्तसिक्खावयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जइ। पडिवज्जित्ता तमेव चाउग्घंटं आसरहं दुरूहति। दुरूहित्ता जामेव दिसं पाउब्भूते तामेव दिसं पडिगते॥ ४८॥

भावार्थ— तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर ने सुबाहुकुमार तथा बहुत विस्तारवाली ऋषियों की यावत् परिषद् (सभा)को धर्मोपदेश दिया। यावत् जब परिषद् लौट गई, तब सुबाहुकुमार श्रमण भगवान् महावीर के पास धर्मोपदेश सुनकर, उसे हृदय में धारण कर यावत् हृदयसे सन्तुष्ट होकर उठे। उठकर श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार प्रणाम (नमस्कार) करके इस प्रकार बोले, हे भगवन्! मैं इन निर्ग्रन्थ प्रवचन (जैन-मार्ग) पर श्रद्धान करता हूं और बडे प्रेम से इस पर प्रतीति करता हूं। भगवन्! यह निर्ग्रन्थ-मार्ग मुझे बडा भला मालूम होता है। हे भगवन्! निर्ग्रन्थ-मार्ग में मैं उद्योग करता हूं। हे भगवन्! निर्ग्रन्थ प्रवचन यही है, जैसाकि आपने उपदेश किया है और यह ऐसा ही है। अन्यथा नहीं है। हे भगवन्! यह सन्देह रहित है। यावत् जो आपने कहा है। इतना कहकर फिर इस प्रकार बोले जिस प्रकार देवानुप्रिय (भगवान् महावीर) के समीप बहुत से उग्रवंशज, उग्रवंश के कुमार, भोगवंशज, भोगवंश के कुमार, भगवान् के वंशज और भगवान् के वंश के कुमार, इक्ष्वाकु वंशज, इक्ष्वाकु वंशके कुमार, ज्ञातवंशज, ज्ञातवंश के कुमार, कौरव वंशज कौरव वंश के कुमार, क्षत्रिय वंशज, क्षत्रिय वंश के कुमार, शूरवीर, योद्धा, प्रशस्तार (धर्मशास्त्र के पाठक)मल्लकी (राजविशेष,) लेच्छकी (राजविशेष,) तथा अन्य बहुत से राजा, युवराज

तलवर मडम्बाधिपति, कुटुम्बनायक, इभ्य (जिस के पास इतना सोना हो कि जिस सोने से हाथी ढक सके वह) श्रेष्ठि, सेनापति, और सार्थवाह वगैरह ने मुण्डित होकर गृहत्याग करके मुनि-दिक्षा स्वीकार की है। किन्तु मेरा दुर्भाग्य है, कि मैं यावत् दीक्षा लेने के लिए समर्थ नहीं हूं। हे देवानुप्रिय! मैं आप के समीप पांच अणुव्रत (एकदेश अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, और परिग्रह परिमाण) और सात शिक्षाव्रत (दिग्व्रत, देशव्रत, अनर्थदण्डव्रत, सामायिक प्रोषधोपवास, भोगोपभोग–परिमाण और अतिथिसंविभाग) इस तरह बारह प्रकार के गृहस्थधर्म को धारण करूंगा (भगवान् ने कहा) जिस प्रकार सुख हो उसमें ढील न करो। तदनन्तर उस सुबाहुकुमार ने, श्रमण भगवान् महावीर के समीप बारह प्रकार के गृहस्थधर्म को— पचाणुव्रत और सात शिक्षाव्रतों को— स्वीकार किया। स्वीकार करके उसी चार घंटोंवाले घोडों के रथ पर सवार हुआ। सवार होकर जिस दिशा-जिस तरफ से — आया था, उसीदिशा— उसी ओर- - वापस चला गया॥४८॥

मूलम्— तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूती नामं अणगारे गोयमगोत्ते णं सत्तुस्सेहे समचउरंससंठाणसंठिए वज्जरिसभनारायसंघयणे कणगपुलगनिघसपम्हगोरे, उग्गतवे दित्ततवे तत्ततवे महातवे उराले घोरे घोरगुणे, घोरतवस्सी, घोरबंभचेरवासी उच्छूढसरीरे संखित्तविउलतेयलेस्से चोद्दसपुव्वी चउणाणोवगए सव्वक्खरसन्निवाती समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते उड्ढंजाणू अहोसिरे झाणकोट्ठोवगए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तए णं से भगवं गोयमे जायसड्ढे, जायसंसए जायकोउहल्ले, उप्पन्नसड्ढे उप्पन्नसंसए उप्पन्नकोउहल्ले संजायसड्ढे संजायसंसए संजायकोउहल्ले

भग० श १ उ १ पत्र ११ पृ १ प १ से प्रारंभ

समुप्पन्नसड्ढे समुप्पन्नसंसए समुप्पन्नकोउहल्ले उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठाए उट्ठेत्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, करेत्ता वंदति, णमंसति ! वंदित्ता णमंसित्ता णच्चासन्ने णातिदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे विणएणं पंजलिउडे पज्जुवासमाणे एवं *वयासी ॥ ४९ ॥

भावार्थ— उसी काल के उसी समय मे श्रमण भगवान् महावीर के पट्टशिष्य इन्द्रभूति नामक अनगार-- जिनका गोत्र गौतम था । सात हाथ का शरीर था । जो समचतुरस्र संस्थान और वज्रऋषभनाराच संहनन से युक्त थे । शरीर कसौटी पर घिसे हुए सोने या पद्म (कमल) सरीखा गोरा था । उग्र तपस्वी (अचिन्तनीय तप करने वाले) दीप्त तपस्वी (अग्नि-के समान कर्मरूपी वन को जलाने वला तप करने वाले) तप्ततपस्वी (कर्म-को तपाने वाली तपस्या करने वाले) महातपस्वी (निष्काम तपस्या करने-वाले) उदार और घोर (परिषह जीतने मे निर्दयी) थे । घोर-गुण शाली थे । घोर तप करने वाले थे । घोर ब्रह्मचारी थे । शरीर की सेवा शुश्रूषा-से रहित थे । अपनी विपुल तेजोलेश्या को संक्षिप्त करने--काम में न लाने-वाले थे । चतुर्दश पूर्व के ज्ञाता थे । चार--मति श्रुत अवधि और मन पर्यय-ज्ञानों को धारण करने वाले थे । सर्व अक्षरों के उदात्तादि विकल्पों को जानने वाले थे । वे इन्द्र भूति गौतम, श्रमण भगवान् महावीर के पास-- न बहुत दूर न बहुत पास-- बैठे हुए थे । घुटने ऊपर की ओर तथा शिर नीचे किए हुए ध्यान रूपी कोठे में प्राप्त थे, संयम और तप के द्वारा आत्मा की भावना करते हुए विहार कर रहे थे । उसी समय इन भगवान् गौतम को तत्वों की श्रद्धा होने से, संशय (जिज्ञासा रूप) हुआ इसी कारण उन्हे कौ-तूहल पैदा हुआ । इस लिए वहा से उठ कर जहा श्रमण भगवान् महावीर

* भगवती पाठ समाप्त

थे वहां आये। आकर श्रमण भगवान महावीर को दक्षिण दिशा से आ-रम्भ कर के तीन प्रदक्षिणा दी। प्रदक्षिणा देकर स्तुति और नमस्कार किया। स्तुति और नमस्कार कर के न बहुत पास और न बहुत दूर से अर्थात् थोडी दूर से सामने शुश्रूषा और नमस्कार करते हुए विनय पूर्वक हाथ जोड कर सेवा करते हुए, इस प्रकार बोले- ॥४६॥

मूलम्— अहो णं भंते! सुबाहुकुमारे इट्ठे इट्ठरूवे कंते कंतरूवे पिए पियरूवे मणुण्णे मणुण्णरूवे मणामे मणामरूवे सोमे सुभगे पियदंसणे सुरूवे बहुजणस्स वि य णं भंते, सुबाहुकुमारे इट्ठे इट्ठरूवे जाव सुरूवे, साहुजणस्स वि य णं भंते सुबाहुकुमारे इट्ठे इट्ठरूवे जाव सुरूवे सुबाहुणा भंते कुमारेणं इमेयारूवा उराला माणुस्सरिद्धी किण्णा लद्धा किण्णा पत्ता किण्णा अभिसमण्णागया, के वा एस आसी पुव्वभवे किं नामए वा किंवा गोएणं कयरंसि वा गामंसि वा सन्निवेसंसि वा किं वा दच्चा किं वा भोच्चा किं वा समायरित्ता कस्स वा तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आयरियं सुवयणं सोच्चा निसम्म सुबाहुणा कुमारेण इमा एयारूवा उराला माणुस्सिद्धी लद्धा पत्ता अभिसमण्णागया ॥ ५० ॥

भावार्थ— हे भगवन्! यह सुबाहुकुमार बहुत से आदमियों को इष्ट, इष्टरूप वाला, कान्त (सुन्दर), कान्तरूप वाला, प्रिय, प्रियरूप वाला, मनोज्ञ, मनोज्ञरूप वाला, मनोहर, मनोहररूप वाला, सौम्य, सुभग (सौभाग्यवान्) प्रियदर्शन (देखने में प्यारा) सुरूप लगता है, और हे भगवन्! यह सुबाहुकुमार साधुजनों को भी इष्ट इष्टरूपवाला यावत् सुरूप लगता है। हे भगवन्! सुबाहुकुमार को इष्टता, इष्ट रूपता यावत् सुरूपता, और हे भगवन् इस तरह की उदार मनुष्य-ऋद्धि का लाभ कैसे हुआ है? वह कैसे पाई है?

इसके सामने यह स्वय ही आई थी? पूर्वभव मे यह कौन था ? इसका नाम क्या था? गोत्र क्या था? किस गाव और किस जगह रहने वाला था? कौनसा दान देकर कौन से भोग भोगकर, कौनसा आचरण करके, किस श्रमण (साधु) या ब्राह्मण के पास, किस आचार सम्बन्धी एक भी वचन को सुनकर और हृदय मे धरकर इस सुबाहुकुमार ने इस प्रकार की यह उदार मनुष्य ऋद्धि पाई है? या स्वय यह सामने आई है? ॥ ५० ॥

मूलम्— एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं, इहेव जम्बूद्दीवे दीवे भारहे वासे हत्थिणाउरे नामं नगरे होत्था। रिद्धित्थिमियसमिद्धे वन्नओ। तत्थ णं हत्थिणाउरे णगरे सुमुहे नामं गाहावई परिवसति। अड्ढे दित्ते विच्छिण्ण-विपुलभवणसयणासणजाणवाहणाइण्णे बहुधणबहुजायरूव-रयए आओगपओगसंपउत्ते विच्छड्डियपउरभत्तपाणे बहुदा-सीदासगोमहिसगवेलगप्पभूए बहुजणस्स अपरिभूए। तेणं कालेणं तेणं समएणं धम्मघोसा णामं थेरा जातिसंपण्णा जहेव सुहम्मसामी तहेव पंचहिं समणसतेहिं सद्धिं संपरिवु-डा पुव्वाणुपुव्विं चरमाणा गामाणुगामं दूइज्जमाणा जेणेव हत्थिणापुरे, जेणेव सहस्संबवणे उज्जाणे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समए-णं धम्मघोसाणं थेराणं अंतेवासी सुदत्ते णामं अणगारे उराले जाव संखित्ततेउलेस्से मासंमासेणं खममाणे विहरइ। तए णं से सुदत्ते अणगारे मासक्खमणपारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेति। बीयाए पोरिसीए झाणं झिया-

१ भ श २ उ ५ प सू० १०७ १०८- २ प ४ से प्रारभ
२ भग- समाप्त

ति। तइयाए पोरिसीए धम्मघोसे थेरे आपुच्छति. आपु-च्छित्ता हत्थिणाउरे नगरे अणुप्पविट्ठे. उच्चनीयमज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स अडमाणे सुमुहस्स गाहावतिस्स गिहं अणुप्पविट्ठे। तए णं से सुमुहे गाहावई सुदत्तं अणगारं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठे जाव आसणातो अब्भुट्ठे-ति, अब्भुट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहति. पच्चोरुहित्ता पाउया-ओ मुयति, मुइत्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ. करेत्ता सुद-त्तं अणगारं सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता तिक्खु-त्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव भत्तघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सएणं हत्थेणं विपुलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभिस्सामि त्ति तुट्ठे, पडिलाभेमाणे वि तुट्ठे पडिला-भिए वि तुट्ठे। तए णं तस्स सुमुहस्स गाहावइस्स तेणं दव्व-सुद्धेणं दायगसुद्धेणं पत्तसुद्धेणं तिविहेणं तिकरणसुद्धेणं सुदत्ते अणगारे पडिलाभिए समाणे संसारे परित्तीकते मणुस्साउए निबद्धे गिहंसि य से इमाइं पंच दिव्वाइं पाउब्भू-याइं। तंजहा—१ वसुहारा वुट्ठा २ दसद्धवण्णे कुसुमे निवा-तिते ३ चेलुक्खेवे कते ४ आहयाओ देवदुंदुहीओ ५ अंत-रा वि य णं आगासंसि "अहोदाणमहोदाणं" घुट्ठे य। हत्थि-णाउरे सिंघाडगजावपहेसु बहुजणो अण्णमण्णस्स एव-माइक्खेइ, एवं भासइ, एवं पन्नवेइ, एवं परूवेइ, धन्ने णं देवाणुप्पिए सुमुहे गाहावई सुकयपुन्ने कयलक्खणे सुलद्धे णं मणुस्सजम्मे सुकयत्थरिद्धी य जाव तं धण्णे॥ ५१॥

भावार्थ— श्रमण भगवान महावीर बोले- हे गौतम! उस काल के उस समय में इसी जम्बूद्वीप नामक द्वीप में भरतक्षेत्र था। उस में

हस्तिनापुर नामक नगर था। वह ऋद्धि से परिपूर्ण- समृद्ध था। उसका विशेष वर्णन औपपातिक सूत्र में है। उस हस्तिनापुर नगर में सुमुख नाम का गाथापति (सेठ) रहता था। वह धन धान्य से परिपूर्ण, विस्तृत और बड़े बड़े भवन, शय्या, आसन, यान, और वाहनों से युक्त था। बहुत से धन और सुवर्ण से परिपूर्ण था। उसी समय जातिसम्पन्न (जिन का मातृपक्ष शुद्ध था), और सुकुमारनामा की नाई पाच सौ श्रमणों से साथ२— उन से घिरे हुए- धर्मघोष नामक स्थविर अनुक्रम से चलते हुए, एक गाव से दूसरे गाव होकर, हस्तिनापुर में जिस ओर 'सहस्राम्र वन' नामक उद्यान था।, उसी ओर आये। आकर यथायोग्य आज्ञा लेकर संयम और तप से आत्मा का चिन्तन करते हुए विहार करने लगे। उसी काल के उसी समय धर्मघोष स्थविर के शिष्य, उदार और यावत् अपनी तेजोलेश्या को संक्षिप्त करने वाले सुदत्त नामक अनगार महीने महीने में पारणा करते हुए विहार कर रहे थे। उस के बाद वह सुदत्त अनगार एक महीने के पारणे के दिन, पहले पहर में सज्झाय (स्वाध्याय) करके दूसरे पहर में धर्मध्यान और तीसरे पहर में धर्मघोष स्थविर से अर्थात् अपने गुरु से आज्ञा लेकर हस्तिनापुर नगर में घुमे। वहाँ ऊच नीच और मध्यमकुल वाले घर में भिक्षा के लिए घूमते घूमते सुमुख नामक गाथापति (प्रतिष्ठित साहूकार) के घर में प्रवेश किया। सुमुख गाथापति ने सुदत्त अनगार को आते हुए देखा। देखकर हर्षित और सन्तुष्ट होकर यावत् आसन से उठ बैठा। उठकर आसन से उतरा। उतरकर पॉवड़ी उतारी। पॉवड़ी उतारकर एक दुपट्टा डाला, दुपट्टा डालकर सात आठ हाथ सामने गया, और वहाँ जाकर दक्षिण दिशा से प्रारम्भ करके तीन प्रदक्षिणाए दी। वन्दना की और नमस्कार किया। वन्दना और नमस्कार करके भोजनशाला की ओर आया। वहाँ आकर 'अपने हाथ से अशन पान खाद्य और स्वाद्य— चारों प्रकार के— आहार का दान दूगा' ऐसा सोचकर प्रमुदित हुआ। देते समय आनन्दित

हुआ और देकर भी सन्तुष्ट हुआ । उस सुमुख गाथापति ने शुद्ध द्रव्य (देय) शुद्ध दाता शुद्ध पात्र होने तथा तीन करण और तीन योगों की शुद्धि- पूर्वक सुदत्त अनगार को आहार-दान देकर संसार हलका किया--कमक्रिया---- और मनुष्य आयु का बन्ध किया, तथा उस के घर पांच दिव्य प्रगट हुए । वे इस प्रकार हैं-१ बारह करोड सुवर्ण दीनारों की वर्षा हुई, २ पांच वर्ण के फूलों की वृष्टि हुई ३ सुगंधित वस्त्रों की वृष्टि हुई ४ आकाशमें देव दुन्दुभिका शब्द हुआ ५ आकाशमें "अहोदान 'अहोदान" शब्द हुआ । हस्तिनापुर में तिराहों चौरस्तों यावत सड़कों पर अर्थात जगह २ अनेक मनुष्य आपस में इस प्रकार बातचीत करने लगे इस प्रकार भाषण करने लगे इस प्रकार प्रतिपादन करने लगे, इस प्रकार प्ररूपणा करने लगे--यह देवानुप्रिय सुमुख गाथापति धन्य है ' पुण्यवान है । सुलक्षण है । शुभकर्म का लाभ इसे हुआ है । मनुष्यजन्म और उत्तम ऋद्धिवाला यावत यह धन्य है ॥ ५१ ॥

मूलम्— से सुमुहे गाहावई बहूइं वाससयाइं आउयं पालेति । पालित्ता कालमासे कालं किच्चा इहेव हत्थिसीसे णगरे अदीणसत्तुस्स रण्णो धारिणीए देवीए कुच्छिंसि पुत्ताए उववण्णो । तए णं सा धारिणी देवी सयणिज्जंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी२तहेव सीहं पासइ । सेसं तं चेव जाव उप्पिंपासायवरगते विहरइ । त एवं खलु गोयमा ' सुबाहुणा इमा एयारूवा माणुस्सरिद्धी लद्धा पत्ता, अभिसमन्नागया । पहू णं भंते ' सुबाहुकुमारे देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए? हंता पभू । तते णं से भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ , नमंसइ । वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति । तए णं से समणेभगवं महावीरे अण्णया

कयाइ हत्थिसीसाओ नगराओ पुप्फकरंडाओ उज्जाणाओ कयवणमालप्पियजक्खस्स जक्खायतणाओ पडिणिक्खमति । पडिणिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ । तते णं से सुबाहुकुमारे समणोवासए जाते अभिगयजीवाजीवे उवलद्धपुन्नपावे आसवसंवरणिज्जरकिरियाहिगरणबंधमोक्खकुसले असहिज्जदेवतासुरनागसुवण्णजक्खरक्खसकिन्नरकिंपुरिसगरुलगंधव्वमहोरगाइएहि देवगणेहि निग्गंथाओ पावयणाओ अणइक्कमणिज्जे निग्गंथे पावयणे निस्संकिए निक्कंखिए निव्वितिगिच्छे लद्धट्ठे गहियट्ठे पुच्छियट्ठे अहिगयट्ठे विणिच्छियट्ठे अट्ठिमिजपेम्माणुरागरत्ते अयमाउसो णिग्गंथे पावयणे अट्ठे अयं परमट्ठे सेसे अणट्ठे ऊसियफलिहे अवंगुयदुवारे चियत्तंतेउरघरप्पवेसे बहूहि सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहि चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णिमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेमाणे समणे निग्गंथे फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थपडिग्गहकंबलपायपुंछणेणं पीढफलगसिज्जासंथारएणं ओसहभेसज्जेण य पडिलाभेमाणे अहापरिग्गहिएहि तवोकम्मेहि अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥८२॥

भावार्थ— वह सुमुख गाथापति बहुत दिनों तक जीवित रहा। अन्त में काल करके- मरकर- इसी हस्तिशीर्ष नगर में अदीनशत्रु राजा के यहां धारिणी देवी की कुक्ष से, पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ है। जब यह गर्भ में आया तब उस महारानी धारिणी ने शय्या पर कुछ सोते और कुछ जागते हुए—— अर्द्धनिद्रा——में जागने के समय पहले कहे अनुसार सिंह को स्वपन में देखा था। शेष पूर्व के समान समझना, यावत् ऊंचे प्रासाद में रहने लगा। सो हे

१ भग० श० २ उ० ५ प० १३७-२ प० ६ से प० १३ तक।

गौतम! सुबाहुकुमार ने इसप्रकार यह मनुष्य- ऋद्धि पाई है, वह सन्मुख आई है। गौतम स्वामी बोले हे भगवन्! सुबाहुकुमार क्या आप के समीप मुण्डित होकर, घर से निकल कर, साधु- दीक्षा लेने को समर्थ है? भगवान बोले - हाँ, समर्थ है।

तत्पश्चात् भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर की वन्दना की और नमस्कार किया। वन्दना और नमस्कार करके १७ प्रकार के संयम और १२ प्रकार के तप पूर्वक आत्मचिन्तन करते हुए विहार करने लगे। तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर हस्तिशीर्ष नगर के पुष्पकरण्ड उद्यान के, कृतवनमालप्रिय यक्ष के, यक्षायतन से निकले, और निकलकर बाहर देशों में विहार करने लगे। अब वह सुबाहुकुमार श्रावक हुआ। उसने जीव और अजीव तत्त्वों को जाना, पुण्य और पाप को जाना, आश्रव- संवर- निर्जरा क्रिया अधिकरण- बंध और मोक्ष के जानने में कुशल हुआ। उसे कोई भी सम्यक्त्व से विचलित नहीं कर सकता था। देव असुरकुमार नागकुमार ज्योतिषदेव यक्ष राक्षस किन्नर किम्पुरुष गरुडध्वज (सुवर्णकुमार) गन्धर्व महोरग आदि देवों के समूह की सहायता न लेने वाला था। और वे उस से निर्ग्रन्थ प्रवचन का उल्लंघन नहीं करा सकते थे। उसे निर्ग्रन्थ प्रवचन में शंका नहीं थी। अन्य दर्शनों (मतों) की आकांक्षा नहीं थी। दानादि के फल में उसे शंका नहीं थी। उसने जीवादि तत्त्वों को सुना, उन के अर्थ को जाना, पूछा और निश्चय किया तथा उन का तात्पर्य जान लिया था। उसकी हड्डियाँ और मज्जा, सर्वज्ञदेव के वचन के प्रेम अनुराग से ही अनुरक्त थीं। हे आयुष्मन्! वह यह सोचा करता था, कि निर्ग्रन्थ प्रवचन ही अर्थ है। यही परमार्थ है, और शेष सब अनर्थ है। उस के मकान का आगल (भागल-भोगल बेंडा) अलग पड़ा रहता था। दरवाजा खुला पड़ा रहता था। वह यदि दूसरों के अन्तःपुर या घर में जाता तो उन्हें अच्छा लगता था, अर्थात् उसपर

किसी का अविश्वास नहीं था। अथवा उसने दूसरों के अन्तःपुर और घर में जाना आना छोड़ दिया था, वह शीलव्रत, गुणव्रत, वेरमण (रागद्वेष-आदि की निवृत्ति), प्रत्याख्यान (पोरिसी आदि) और पौषध उपवास करता था, चतुर्दशी अष्टमी अमावस्या और पूर्णिमा के दिन पूर्ण पौषध अच्छी तरह पालन करता था। निर्ग्रन्थ मुनियों को प्रासुक-निर्दोष अशन पान, खाद्य और स्वाद्य, तथा वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण बाजोठ पाटिया, शय्या, और संथारा, तथा औषध भेषज आदि दान करता हुआ, स्वीकार किए अनुसार तप आदि क्रियाओं को करके आत्मा का चिन्तन करता रहता था ॥५२॥

मूलम्—तते णं से सुबाहुकुमारे अण्णया कयाइं चाउद्दसट्टमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु जेणेव पोसहसाला, तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता पोसहसालं पमज्जति। पमज्जित्ता उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ। पडिलेहित्ता दब्भसंथारं संथरेइ। संथरित्ता दब्भसंथारं दुरूहइ। दुरूहित्ता अट्ठमभत्तं पगिण्हति। पगिण्हित्ता पोसहसालाए पोसहिए अट्ठमभत्तिए पोसहं पडिजागरमाणे विहरति। तते णं तस्स सुबाहुकुमारस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए मणोगते संकप्पे, धण्णा णं ते गामागरनगरखेडकब्बडदोणमुहपट्टणासमणिगमसंवाहसण्णिवेसा जत्थ णं समणे भगवं महावीरे विहरति। धण्णा णं ते राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियइब्भसेट्ठिसेणावइसत्थवाहप्पभिइओ समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए मुंडा भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वयंति। धण्णा णं ते राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियइब्भसेट्ठिसेणावइसत्थवाहप्पभिइओ, जे णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए पंचाणुव्वयाइं जाव गिहिधम्मं पडिवज्जंति।

धण्णा णं ते राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियइब्भसेट्ठिसेणावइसत्थवाहप्पभिइओ जे णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सुणेति। तं जइ णं समणे भगवं महावीरे पुव्वाणुपुव्वि चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे इहमागच्छेज्जा जाव विहरिज्जा ततो णं अहं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा ॥ ५३॥

भावार्थ—इसके बाद वह सुबाहुकुमार, किसी समय चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या और पूर्णमासी के दिन पोषधशाला में आया। वहां आकर पोषधशाला को प्रमार्जित किया (पूजा) शौच और लघुशंका करने के स्थान का प्रतिलेखन किया- अच्छी तरह देखा भाला। देखभालकर डाभ(दूब) का आसन बिछाकर, उसी आसन के ऊपर बैठा। बैठकर अष्टभक्तव्रत का पालन किया। इस के बाद किसी समय सुबाहुकुमार आधी रात के समय धर्म जागरण कररहा था। उस समय,उसे इस प्रकार का अध्यात्मिक विचार पैदा हुआ-वह गाव आकर (जहाँ नमक आदि की खान हो वह) नगर, खेट (जहां कच्चा का किला हो वह) कर्वट (कुगाव) मडम्ब (जिस के आसपास दूसरी बस्ती न हो वह) द्रोणमुख (जल और स्थलमार्ग वाला नगर) पत्तन(स्थलमार्ग या जलमार्ग से गम्य और व्यापार का केन्द्र अथवा रत्नभूमि) आश्रम (तपस्वी आदि का निवासस्थान) निगम(व्यापारिक शहर) तथा सबाह (पर्वत के ऊपर या किले के अन्दर का गाव) सन्निवेश (पुरा टोला मोहल्ला)आदि धन्य है। जहां श्रमण भगवान् महावीर विहार करते हैं। और वह राजा राजकुमार तलवर मडम्बराज कौटुम्बिक इभ्य श्रेष्ठी सेनापति और सार्थवाह वगैरह भी धन्य हैं जो श्रमण भगवान महावीर के समीप मुण्डित होकर गृहस्थी से अनगारपन धारण

* पहिले दिन एकाशन कर के, तीन दिन उपवास करना, फिर अगले दिन एकाशन करना अष्टभक्त व्रत होता है। क्योंकि इस मे अष्ट-आठ बार का- भक्त-भोजन का त्याग किया जाता है।

करते है। तथा वे राजा राजकुमार तलवर मडवराज कोटुम्बिक इभ्य श्रेष्ठी, सेनापति और सार्थवाह वगैरह भी धन्य है[1] जो श्रमण भगवान् महावीर के समीप गृहस्थ धर्म स्वीकार करते है। तथा वे राजा राजकुमार तलवर मडवराज कोटुम्बिक इभ्य श्रेष्ठी सेनापति सार्थवाह वगैरह भी धन्य है, जो श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के समीप धर्मोपदेश सुनते है। इसलिए यदि श्रमण भगवान् महावीर पूर्वानुपूर्वी से चलते हुए ग्रामानुग्राम विहार करते हुए, यहाँ आवेगे, यावत् विहरा करेगे, तब ही मै श्रमण भगवान् महावीर के समीप, मुण्डित होकर, गृहस्थी त्यागकर मुनि-दीक्षा धारण करूँगा ॥५३॥

मूलम्— तते णं समणे भगवं महावीरे सुबाहुस्स कुमारस्स इमं एयारूवं अज्झत्थियं जाव वियाणित्ता पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दुइज्जमाणे जेणेव हत्थिसीसे णगरे जेणेव पुप्फकरंडगउज्जाणे वण्णओ, कयवणमालपियस्स जक्खस्स जक्खायतणे वण्णओ, तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति। तहेव परिसा राया निग्गता। तते णं से सुबाहुकुमारे तं महया जहा पढमं तहा निग्गओ। धम्ममाइक्खइ, तंजहा— सव्वओ पाणातिवायाओ वेरमणं, सव्वओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वओ अदिन्नादाणाओ वेरमणं, सव्वओ मेहुणाओ वेरमणं, सव्वओ परिग्गहाओ वेरमणं। तए णं सा महतिमहालिया मणूसपरिसा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा तहेव परिसा राया पडिगया ॥ ५४॥

१ उववाइ प ८०-२ प १ मे
२ उववाइ समास

भावार्थ— तत्पश्चात ही श्रमण भगवान् महावीर ने सुबाहुकुमार के इस प्रकार के आध्यात्मिक विचारको यावत जानकर,अनुक्रम से चलते हुए ग्रामानुग्राम विहार करते हुए हस्तिशीर्ष नगर के, पहले वर्णन कियेहुए पुष्पकरण्ड उद्यान में जो कृतवनमालप्रिय यक्ष का यक्षायतन था, उस मे —जिसका कि वर्णन पहिले किया चुका हैं— आये। आकर यथोचित आज्ञापूर्वक स्थान लेकर, संयम और तप पूर्वक आत्म-चिन्तन करते हुए विहार करने लगे। नहले का नाट्य परिषद् (जन समूह) और राजा वन्दना करने के लिए निकला। बाद में सुबाहुकुमार बडे ठाठबाट से पहले की तरह वन्दना करने निकला। भगवान् महावीर ने इस प्रकार धर्मोपदेश दिया—सब प्रकार के प्राणातिपात (हिंसा) से रहित होना, सब तरह के असत्य वचनों का त्याग करना, सब तरह के अदत्तादान से रहित होना, सब प्रकार के मैथुन से विरक्त होना और सब तरह के परिग्रह से रहित होना ये पाच महाव्रत है। अनन्तर वह बहुत बडा जन-समुदाय और राजा, श्रमण भगवन् महावीर से धर्मोपदेश सुनकर पहले की तरह वापस चला गया ॥५४॥

मूलम् — तते णं से सुबाहुकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोचा निसम्म हट्ठ तुट्ठे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, करेत्ता वंदेइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता, एवं वयासी—सद्दहामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं, एवं पत्तियामि णं, रोएमि णं, अब्भुट्ठेमि ण भंते ! णिग्गंथं पावयणं, एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते ! इच्छियमेयं भंते ! पडिच्छिय-मेयं भंते ! इच्छियपडिच्छियमेयं भंते ! से जहेव तं तुब्भे वदह । जं नवरं- देवाणुप्पिया! अम्मापियरो आपुच्छामि ।

१ ज्ञाता अ १ प ४६ – २ प—१ नाचेसे

ततो पच्छा देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता णं अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामि। अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह ॥ ५५ ॥

भावार्थ— तदनन्तर सुबाहुकुमार ने श्रमण भगवान् महावीर के समीप धर्मोपदेश सुनकर, उसे हृदय में धारण करके, हर्षित और सन्तुष्ट होकर, श्रमण भगवान् महावीर को, तीन वार दक्षिण दिशासे शुरू कर के प्रदक्षिणा की। प्रदक्षिणा करके वन्दना और नमस्कार किया। वन्दना और नमस्कार करके इस प्रकार बोला-- हे भगवन्! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में श्रद्धा रखता हूँ, प्रतीति करता हूँ, वह मुझे रुचता-- भला लगता है। हे भगवन्! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन को स्वीकार करता हूं। हे भगवन्! निर्ग्रन्थ प्रवचन यही है, यह इसी प्रकार है, जैसा आपने कहा है। यही तथ्य —सत्य— है। हे भगवन्! यह अन्यथा नहीं है। हे भगवन्! यही इष्ट है। हे भगवन्! यही अभीष्ट है। हे भगवन्! यही इष्ट-अभीष्ट है। यह सब ठीक है, जो कि आपने कहा है, किन्तु हे देवानुप्रिय! इतना विशेष है कि मैं अपने माता पिता से पूछता हूँ, और पूछने—आज्ञा लेने-के अनन्तर आपके पास मुण्डित होकर, गृहस्थी को त्याग कर मुनि दीक्षा स्वीकार करूंगा। भगवान् महावीर बोले-- हे देवानुप्रिय! जिस प्रकार सुख की प्राप्ति हो, उस में ढील न करो ॥ ५५ ॥

मूलम्— तते णं से सुबाहुकुमारे समणं भगवं महावीरं वंदति णमंसति, वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव चाउग्घंटे आसरहे, तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता चाउग्घंटं आसरहं दुरूहति, दुरूहित्ता महया भडचडगरपहकरेणं हत्थिसीसस्स नगरस्स मज्झंमज्झेणं जेणामेव सए भवणे

१ वार वार इष्ट या भाव पूर्वक स्वीकृत किया।

तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चाउग्घंटाओ आसरहाओ पच्चोरुहइ । पच्चोरुहित्ता जेणामेव अम्मापियरो तेणामेव उवागच्छइ,उवागच्छित्ता अम्मापिऊणं पायवंदणं करेइ, करेत्ता एवं वयासी—एवं खलु अम्मयाओ! मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अतिए धम्मे णिसंते, से वि य धम्मे मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए । तते णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स अम्मापियरो सुबाहुकुमारं एवं वयासी—धन्नोसि णं तुमं जाया संपुण्णो० कयत्थो० कयलक्खणोसि तुम जाया,जं णं तुमे समणस्स भगवओ महावीरस्स अतिए धम्मे णिसंते से वि य ते धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए । तते णं से सुबाहुकुमारे अम्मापियरो दोच्चंपि तच्चंपि एवं वयासी--एवं खलु अम्मयाओ!मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अतिए धम्मे णिसंते, सेवि य धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए तं इच्छामि णं अम्मयाओ!तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए मुंडे भवित्ता णं अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए । तते णं धारिणी देवी तं अणिट्ठं अकंतं अप्पियं अमणुन्नं अमणामं असुयपुव्वं फरुसं गिरं सोच्चा णिसम्म इमेणं एयारूवेणं मणोमाणसिएणं महया पुत्तदुक्खेणं अभिभूता समाणी सेयागयरोमकूवपगलंतविलीणगाया सोयभरपवेवियंगी णित्तेया,दीणविमणवयणा करयलमलियव्व कमलमाला तक्खणओ लुग्गदुब्बलसरीरा लावन्नसुन्नणिच्छायगयसिरीया पसिढिलभूसणपडंतखुम्मियसंचुन्नियधवलवलयपब्भट्ठउत्तरिज्जा सूमालविकिन्नकेसहत्था मुच्छावसणट्ठचेयगरुई परसुनियत्तव्व चंपगलया, णिव्वत्तमहेव्व इंदलट्ठी, विमुक्कसंधिबंधणा कोट्टिमतलंसि सव्वंगेहिं

धसत्ति पडिया । तते णं सा धारिणी देवी ससंभमोववत्तियाए तुरियं कंचणभिंगारमुहविणिग्गयसीयलजलविमलधाराए परिसिंचमाणा निव्वावियगायलट्ठी उक्खेवगतालविटवीयग-गजणियवाएणं सफुसिएणं अंतोउरपरियणेणं आसासिया समाणी मुत्तावलिसन्निगासपवडंतअंसुधाराहिं सिंचमाणी पओहरे, कलुणविमणदीणा रोयमाणी,कंदमाणी,तिप्पमाणी, सोयमाणी विलवमाणी सुबाहुकुमारं एवं वयासी ॥५६॥

भावार्थ— इसके अनन्तर सुबाहुकुमार ने श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना की और नमस्कार किया। वन्दना और नमस्कार करके, जिधर चार घंटों वाला रथ था, उधर आया। आकरके, चार घंटों वाले रथ पर सवार होकर, बहुत से सुभट और चाकरों सहित, हस्तिशीर्ष नगर के बीचों बीच होकर अपने भवन की तरफ आया। आकर चार घंटेवाले रथ से उतर कर, जिस ओर माता पिता थे, उस ओर आया। आकर माता पिता को प्रणाम करके इस प्रकार कहने लगा- — हे माता पिता! मैंने श्रमण भगवान् महावीर के समीप धर्मोपदेश सुना है, उस धर्म की मैं इच्छा करता हूँ, और बार बार इच्छा करता हूँ। मुझे वह रुचता है। यह सुनकर सुबाहुकुमार के माता पिता सुबाहुकुमार से इस प्रकार बोले— हे पुत्र! तुम धन्य हो, पुण्यवान् हो, कृतार्थ हो, और हे पुत्र! तुम शुभलक्षण हो, क्योंकि तुमने श्रमण भगवान् महावीर के समीप धर्म श्रवण किया है, और वह धर्म तुम्हें इष्ट और अभीष्ट तथा रुचिकर हुआ है। अनतर सुबाहुकुमार ने माता पिता से दो तीन बार कहा, कि हे माता पिता! मैंने श्रमण भगवान् महावीर के समीप धर्म श्रवण किया है, और वह धर्म मुझे इष्ट, अत्यंत इष्ट तथा रुचिकर हुआ है। इस कारण हे माता पिता! मैं आपकी आज्ञा लेकर, श्रमण भगवान् महावीर के समीप, मुण्डित हो कर, घर से निकल कर मुनि-दीक्षा लेना चाहता हूँ। धारिणी

देवी इन अनिष्ट अमुहावने, अप्रिय अमनोज्ञ अमनाम अश्रुतपूर्व (जिसे पहले नहीं सुना ऐसे) और कठोर वचनों को सुनकर और हृदय में धारण करके इस प्रकार पुत्र के मानसिक शोक से महादुःखी हुई। रोम रोम से निकलते हुए पसीने से शरीर भीग गया। शोक से शरीर थर थर कांपने लगा, चेहरा फीका पड़ गया, दीन और बेमुख के समान वचन बोलने लगी। वह ऐसे मुरझा गई, जैसे हाथ से मसलने से कमल की माला मुरझा जाती है। "दीक्षा लेना चाहता हूँ" यह सुनते समय ही उसका शरीर निर्बल सा हो गया। उसका शरीर लावण्य शून्य हो गया और उसकी शोभा नष्ट हो गई। दुर्बल होने से कंगन ढीले हो गए। सफेद चूड़ियां धरती पर जा गिरीं और टूटकर चूर चूर हो गई। ओढ़ना शरीर से दूर हो गया, तथा नरम शिर के केश उलझ बिखर गए। मूर्छा आने से चेतना नष्ट होगई। शरीर भारी हो गया। फरसे से छेदीगई चम्पक लता की तरह और उत्सव समाप्त होने पर इन्द्र-स्तम्भ की तरह शोभा रहित हो गई। सारे शरीर की सन्धियां (जोड़) ढीली होने से सारा शरीर वहां के आंगन में गिर पड़ा अर्थात् वह धारिणी धरती पर गिर पड़ी। रानी जब व्याकुल चित्त होकर धरती पर गिर गई तब दासियों ने जल्दी ही सोने की झारी के मुख से निकलती हुई निर्मल शीतल जल की धारा से उसके शरीर को सींचकर ठंडा किया। फिर कमल आदि के पत्ते की डंडी वाले तालवृक्ष के पत्ते के बीजने (पंखे) से पानी के कणों सहित हवा करके शान्त किया। शान्त होनेपर मोतियों की धारा जैसी निकलकर गिरती हुई आंसुओं की धाराओं से कुचों का सिंचन करने लगी। दयापात्र उदास और दीन होती हुई, रोती हुई, चिल्लाती हुई और छाती कूटती हुई, शोक करती हुई, और विलाप करती हुई मेघकुमार से इस प्रकार कहने लगी॥५६॥

मूलम्— तुम्हंसि णं जाया अम्हं एगे पुत्ते, इट्ठे, कंते, पिए, मणुन्ने, मणामे, थिज्जे, वेसासिए, सम्मए, बहुमए, अणुमए भंडकरंडगसमाणे, रयणे, रयणभूते, जीवियउस्सासए, हिययाणंदजणणे, उंबरपुप्फं व दुल्लहे सवणयाए, किमंग पुण पासणयाए, णो खलु जाया अम्हे इच्छामो खणमवि विप्पओगं सहित्तए, तं भुंजाहि ताव जाया! विपुले माणुस्सए कामभोगे जाव, ताव वयं जीवामो। तओ पच्छा अम्हेहिं कालगतेहिं, परिणयवए वड्ढियकुलवंसतंतुकज्जंमि निरावयक्खे, समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइस्ससि।

तते णं से सुबाहुकुमारे अम्मापिऊहिं एवं वुत्ते समाणे अम्मापियरो एवं वयासी—तहेव णं तं अम्मताओ जहेव णं तुम्हे ममं एवं वदह "तुमंसि णं जाया! अम्हं एगे पुत्ते तं चेव जाव निरावयक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससि" एवं खलु अम्मयाओ माणुस्सए भवे अधुवे अणियए असासए, वसणसउवद्दवाभिभूते, विज्जुलयाचंचले अणिच्चे जलबुब्बुयसमाणे कुसग्गजलबिंदुसन्निभे, संझब्भरागसरिसे, सुविणदंसणोवमे सडणपडणविद्धंसणधम्मे पच्छापुरं च णं अवस्सविप्पजहणिज्जे, से के णं जाणंति अम्मयाओ! के पुव्वि गमणाए, के पच्छा गमणाए। तं इच्छामि णं अम्मयाओ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए। तते णं तं सुबाहुकुमारं अम्मापियरो एवं वयासी॥ ५७॥

भावार्थ— बेटे! हमारे तुम इकलौते लडके हो और इष्ट कान्त प्रिय मनोज्ञ मनोरम धीरज बधाने वाले, विश्वास-पात्र मानने योग्य बहुत

माननें योग्य सम्मति देनेवाले अनुमत (कार्य होने के बाद भी मानने योग्य) आभरणों के पिटारे जैसे, रत्न तथा मनुष्य जाति में रत्न जैसे हो। मेरे जीवन के श्वास हो, हृदय को आनन्द देने वाले हो। उम्बर के फूल की नांई, देखना तो दूर रहा तुम्हारा नाम सुनना भी मुश्किल हो जायगा। अतः हे पुत्र! हम तेरा वियोग, एक क्षण भर भी नहीं सहन करना चाहते। इसलिए बेटे! जब तक हम जीते हैं, तबतक मनुष्यों के अनेक भोगोपभोग भोगो। हमारे मरने के बाद परिपक्व अवस्था पाकर, कुल की वृद्धि करने वाले पुत्र पौत्रों को बढ़ाकर सब प्रयोजन साधकर श्रमण भगवान महावीर के समीप मुण्डित होकर घर छोड़ साधुपना लेलेना।

माता पिता के ऐसा कहने पर सुबाहुकुमार माता पिता से कहने लगा, हे माता पिता! जो आपने कहा है "हमारे तुम इकलौते बेटे हो यावत् हमारे मरने के बाद सब प्रयोजन साधकर श्रमण भगवान् महावीर के समीप यावत् दीक्षा लेना"। सो हे माता पिता! यह मनुष्य भव सदा टिकने वाला नहीं है। नियत नहीं है। एक ही क्षण में नष्ट हो सकता है। सैकड़ों व्यसनों—जुआ चोरी आदि के उपद्रवों से भरा है। बिजली की नांई चपल है। अनित्य है। पानी के बुलबुले की तरह या दूब के ऊपर ठहरी हुई पानी की बूंद की नांई चञ्चल है। सन्ध्या समय की लालिमा और स्वप्न दर्शन की तरह क्षणिक है। सड़कर गलना नष्ट होना ही शरीर का स्वभाव है। पहले या पीछे—कभी न कभी इसे अवश्य ही छोड़ना होगा। हे माता पिता! यह कौन जानता है कि माता पिता और पुत्र में से कौन पहले या कौन पीछे मरेगा? इसीलिए हे माता पिता! आप की आज्ञा लेकर श्रमण भगवान् महावीर के समीप दीक्षा लेना चाहता हूँ।

यह सुनकर माता पिता सुबाहुकुमार से कहने लगे ॥ ५७ ॥

मूलम्— इमाओ ते जाया! सरिसियाओ सरित्तयाओ सरिव्वयाओ सरिसलावन्नरूपजोव्वणगुणोववेयाओ

सरिसेहिंतो रायकुलेहिंतो आणिल्लियाओ भारियाओ, तं भुंजाहि णं जाया! एताहिं सद्धिं विउले माणुस्सए कामभोगे, तओ पच्छा भुत्तभोगे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससि।

तते णं से सुबाहुकुमारे अम्मापियरं एवं वयासी–तहेव णं अम्मयाओ! जण्णं तुब्भे ममं एवं वदह "सरिसियाओ जाव समणस्स० पव्वइस्ससि" एवं खलु अम्मयाओ! माणुस्सगा कामभोगा असुई, असासया, वंतासवा, पित्तासवा, खेलासवा, सुक्कासवा, सोणियासवा, दुरुस्सासनीसासा, दुरुयमुत्तपुरीसपूयबहुपडिपुन्ना उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणगवंतपित्तसुक्कसोणियसंभवा अधुवा अणितिया असासया, सडणपडणविद्धंसणधम्मा, पच्छा पुरं च णं अवस्सविप्पजहणिज्जा, से के णं अम्मयाओ! जाणंति, के पुव्विं गमणाए के पच्छा गमणाए, तं इच्छामि णं अम्मयाओ! जाव पव्वइत्तए ॥ ५८ ॥

भावार्थ— हे पुत्र! यह तेरे सरीखी, तेरी त्वचा के समान त्वचा वाली समान उम्र वाली समान लावण्य रूप यौवन और गुणों से युक्त अपने समान राजकुलों से लाई हुई पांच सौ पत्नियों को भोग। हे पुत्र! इन के साथ खूब कामभोग भोग करके, भुक्तभोगी होकर, श्रमण भगवान् महावीर के समीप यावत् दीक्षा ले लेना।

यह सुनकर, सुबाहुकुमार माता पिता से बोला—हे माता पिता! जो आपने मुझे कहा है कि "समान त्वचा वाली इत्यादि विशेषणों सहित स्त्रियों को भोग तथा भुक्त भोगी होकर श्रमण भगवान् महावीर के समीप दीक्षा लेना" सो हे मातापिता! मनुष्यों के कामभोग के आधार शरीर आदि अपवित्र है। अशाश्वत है, इन से वमन उत्पन्न होता है, पित्त

वणाहि य पन्नवेमाणा एवं वयासी-एस णं जाया! णिग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे केवलिए पडिपुन्ने णेयाउए ससुद्धे सल्लगत्तणे, सिद्धिमग्गे मुत्तिमग्गे निज्जाणमग्गे निव्वाण-मग्गे सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे, अहीव एगंतदिट्ठीए, खुरो इव एगंतधाराए लोहमया इव जवा चावेयव्वा वालुयाकवले इव निरस्साए गंगा इव महानदी पडिसोयगमणाए महासमुद्दे इव भुयाहि दुत्तरे तिक्खं चंकमियव्वं गरुयं लंबेयव्वं असि-धारव्व संचरियव्वं, णो खलु कप्पति जाया! समणाणं णिग्गं-थाणं आहाकम्मिए वा उद्देसिए वा कीयगडे वा ठविए वा रइए वा दुब्भिक्खभत्ते वा कंतारभत्ते वा वद्दलियाभत्ते वा गिलाणभत्ते वा मूलभोयणे वा कंदभोयणे वा फलभोयणे वा बीयभोयणे वा हरियभोयणे वा भोत्तए वा, पायए वा, तुमं च णं जाया! सुहसमुचिए णो चेव णं दुहसमुचिए, णालं सीयं, णालं उण्हं, णालं खुहं, णालं पिवासं णालं वातिय-पित्तियसिंभियसन्निवाइयविविहे रोगायंके उच्चावए गामकंटए बावीसं परीसहोवसग्गे उदिन्ने सम्मं अहियासित्तए, भुंजाहि ताव जाया! माणुस्सए कामभोगे तओ पच्छा भुत्तभोगी समणस्स जाव पव्वइस्ससि ॥ ६० ॥

भावार्थ— इसके अनन्तर सुबाहुकुमार के माता पिता सुबाहुकुमार को जब, विषय (रूप रस आदि) के अनुकूल सामान्य वचनों से विशे-ष वचनों से, सम्बोधन वचनों से, विनीत वचनों से सामान्यरूप से, विशेषरूप से और सम्बोधन करके स्नेह नम्र वचनों से न समझा सके तब विषयों के प्रतिकूल संयम से भय और उद्वेग पैदा करनेवाले वचनों से इस तरह बोले—

बेटा! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन सच्चा सब से प्रधान अद्वितीय या केवली

भगवान् से उपदिष्ट, मोक्ष दिलाने वाले गुणों से परिपूर्ण मोक्ष का स्वरूप बताने वाला एकान्तवाद रूपी कलङ्क से रहित (अनेकान्तात्मक) तीन शल्यों—माया, मिथ्यात्व, निदान—को नष्ट करने वाला, सिद्धि (हित की प्राप्ति) का मार्ग, मुक्ति (अहितकर कर्मों के नाश) का मार्ग, सिद्धिक्षेत्र का मार्ग, निर्वाण का मार्ग, और समस्त दुःखों के नाश करने का उपाय है। जिस तरह साँप मांस का ग्रहण करने के लिए उस की ताक में रहता है, इसी तरह इस निर्ग्रन्थ प्रवचन का पालन करने के लिए इस में ही एकाग्र बुद्धि रखनी पडती है। यह छुरे का तरह एक धार वाला है,क्योंकि इस में अपवाद रूप क्रियाओं का अभाव है (अर्थात् चारित्र पालने में किसी तरह की छूट नहीं है) इस का पालन करना लोह के जौ (चने) चबाना है। बालू के कौर के समान (वैषयिक सुख रहित होने से) नि:स्वादु है। गंगा महानदी के पूर का पार करना जैसे मुश्किल है, उसी तरह चारित्र पालन करना भी मुश्किल है। भुजाओं से जैसे समुद्र का पार करना कठिन है, वैसे ही इस प्रवचन का पालन करना कठिन है। तीखी धार वाली तलवार पर आक्रमण करने की तरह कठिन है। जैसे पत्थर की भारी शिला का उठाना सहज नहीं है, उसी तरह चारित्र का पालन करना भी सहज नहीं है। तलवार की धार पर चलने की नाई इस प्रवचन का पालन करना भी कठिन काम है। क्योंकि हे पुत्र! निर्ग्रन्थ साधुओं को आधाकर्मी आहार, औद्देशिक आहार, साधुओं के लिए सामग्री खरीद कर बनाया हुआ आहार, साधुओं के लिए रख छोडा हुआ आहार और साधुओं के लिए फिर नवीन तैयार किया हुआ आहार कल्पनीय— ग्रहण करने योग्य—नहीं है। तथा दुर्भिक्ष के समय भिखारियों के लिए बनाया हुआ, जंगल में सन्यासी आदि भिक्षुओं के लिए दानशाला आदि में तैयार किया हुआ आहार, पानी बरसने पर अनाथों के लिए बनाया हुआ, रुग्ण के आरोग्य होने के लिए दिया हुआ आहार, मूल (जड), कंद

(मूला आदि) फल (आम आदि) धान, तथा अन्य प्रकार का सचित्त भोजन-पान भी श्रमण करने योग्य नहीं है। और हे पुत्र! तेरा सुख में लालन पालन हुआ है दुःख देखा नहीं है, इसलिए तू सर्दी, गर्मी, भूख प्यास वात पित्त कफ सम्बन्धी व सन्निपात आदि विविध रोग आतंक (अचानक प्राणों का घात करने वाले रोग) इन्द्रियों के प्रतिकूल बाईस प्रकार के परिषहों को और उपसर्गों के प्राप्त होनेपर उन्हें सहन न कर सकेगा। इसलिए हे पुत्र! यावत् मनुष्य सम्बन्धी काम भोगों को भोगो। भोगने के बाद भुक्तभोगी होकर श्रमण भगवान् महावीर के समीप यावत् दीक्षा लेलेना ॥ ६० ॥

मूलम्— तते णं से सुबाहुकुमारे अम्मापिऊहिं एवं वुत्ते समाणे अम्मापियरं एवं वयासी—तहेव णं तं अम्मयाओ जण्णं तुब्भे ममं एवं वदह "एस णं जाया! निग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे पुणरवि तं चेव जाव ततो पच्छा भुत्तभोगी समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससि" एवं खलु अम्मयाओ! निग्गंथे पावयणे कीवाणं कापुरिसाणं इहलोगपडिबद्धाणं परलोगणिप्पिवासाणं दुरणुचरे, पागयजणस्स णो चेव णं धीरस्स णिच्छियववसियस्स एत्थ किं दुक्करं करणयाए तं इच्छामि णं अम्मताओ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे समणस्स जाव पव्वइत्तए ॥ ६१ ॥

भावार्थ— माता पिता जब चारित्र की कठिनता बता चुके, तब सुबाहुकुमार माता पिता से बोला— हे माता पिता! आपने जो मुझसे इस प्रकार कहा है, कि "हे पुत्र! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन सत्य है, सब से प्रधान है। (यावत् शब्द से पूर्वोक्त सब विशेषण लगा लेना चाहिए) और इसके पश्चात् भुक्तभोगी होकर, श्रमण भगवान् महावीर के समीप (यावत्) दीक्षा ले लेना" सो हे माता पिता! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन नपुंसक

कायर और कापुरुषों (नीच पुरुषों) को, इस लोक सम्बन्धी लालसाओं में बंधे हुए लोगों को और परलोक के सुख की परवाह न करने वालों को कठिन है। किन्तु मेरे जैसे धीर निश्चित व्यवसाय वालों को—कर्मवीरों को—इसका पालन करना क्या कठिन है? इसलिए हे माता पिता! आपकी आज्ञा लेकर श्रमण भगवान् महावीर के समीप (यावत्) दीक्षा लेना चाहता हूं ॥ ३१ ॥

मूलम्— तते णं तं सुवाहुकुमारं अम्मापियरो जाहे नो संचाएति बहूहिं विसयाणुलोमाहिं य विसयपडिकूलाहिं य आघवणाहि य पण्णवणाहि य सण्णवणाहि य विन्नवणाहि य आघवित्तए वा पण्णवित्तए वा सण्णवित्तए वा विण्णवित्तए वा, ताहे अकामए चेव सुवाहुकुमारं एवं वयासी—इच्छामो ताव जाया! एगदिवसमवि ते रायसिरिं पासित्तए।

तते णं से सुवाहुकुमारे अम्मापियरमणुवत्तमाणे तुसिणीए संचिट्ठति। तते णं से अदीणसत्तू राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! सुवाहुस्स कुमारस्स महत्थं महग्घं महरिहं विउलं रायाभिसेयं उवट्ठवेह। तते णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव ते वि तहेव उवट्ठवेन्ति। तए णं से अदीणसत्तू राया बहूहिं गणणायगदंडणायगेहि य जाव संपरिवुडे सुवाहुकुमारं अट्ठसएणं सोवण्णियाणं कलसाणं १ एवं रुप्पमयाणं कलसाणं २ सुवण्णरुप्पमयाणं कलसाणं ३ मणिमयाणं कलसाणं ४ सुवण्णमणिमयाणं कलसाणं ५ रुप्पमणिमयाणं कलसाणं ६ सुवण्णरुप्पमणिमयाणं कलसाणं ७ भोमेज्जाणं कलसाणं ८ सव्वोदएहिं सव्वमट्टियाहिं सव्वपुप्फेहिं सव्वगंधेहिं सव्वमल्लेहिं सव्वोसहिहिं य सिद्धत्थएहि य सव्विड्ढीए सव्वजुतीए

सव्वबलेणं जाव दुंदुभिनिग्घोसणादितरवेणं महया महया रायाभिसेएणं अभिसिंचति, अभिसिंचित्ता करयल जाव कट्टु एवं वयासी—जय २ नंदा! जय २ भद्दा! जय नंदा! भद्दं ते, अजियं जिणाहि जियं च पालियाहि. जियमज्झे वसाहि, अजियं जिणाहि सत्तुपक्खं, जियं च पालेहि मित्तपक्खं, जाव भरहो इव मणुयाणं. हत्थिसीसस्स णगरस्स अन्नेसिं च बहूणं गामागरनगरजावसन्निवेसाणं आहेवच्चं जाव विहराहि त्तिकट्टु जय जय सद्दं पउंजंति ॥ ३२ ॥

भावार्थ— इस के अनन्तर माता पिता जब सुबाहुकुमार को विषयों के अनुकूल और प्रतिकूल बहुत से सामान्य वचनों विशेष वचनों सम्बोधन वचनों तथा विनय वचनों से न समझा सके, तब निराश होकर सुबाहुकुमार से कहने लगे——हे पुत्र! हम कम से कम एक दिन भी तुम्हें पहले राज्यलक्ष्मी भोगते हुए सिंहासनासीन देखना चाहते हैं। जब सुबाहुकुमार माता पिता के कथन को मानकर चुप हो रहा तब राजा अदीनशत्रु ने सेवकों को बुलाया। उन्हें बुलाकर कहा—— भो देवानुप्रिय! महान् कार्यों में काम आने वाले बहुमूल्य तथा महान् पुरुषों के योग्य (अथवा महान् पुरुषों द्वारा पूज्य) राज्याभिषेक की सामग्री तैयार करो। सेवकों ने भी (यावत्) उसी प्रकार सब सामग्री तैयार की। तदनन्तर बहुत से गणनायकों तथा दंडनायकों—अर्थात् राजकर्मचारियों— से (यावत्) घिरे हुए महाराज अदीनशत्रु ने एक सौ आठ सोने के कलश, एक सौ आठ चादी के कलश एक सौ आठ सोने-चादी के— दोनों को मिला कर बनाये हुए——एक सौ आठ मणियों के एक सौ आठ मणियों से जड़े हुए सोने के, एक सौ आठ मणियों से जड़े हुए चादी के, एक सौ आठ मणियों से जड़े हुए सोने चादी के और एक सौ आठ मिट्टी के कलशों में, भरे हुए सब तीर्थों के जल से सब तीर्थों की मिट्टी से, सब तीर्थों के

फूलों से, सब तीर्थो की सुगंधित चीजो से, सब तीर्थो की मालाओं से, सब औषधियों से, सरसों आदि से. समस्त आभूषण आदि ऋद्धियों से सब कान्ति युक्त पदार्थों से, समस्त सेना द्वारा (यावत्) दुन्दुभि आदि बाजों के घनघोर शब्द से महान महान् राज्याभिषेक किया ! अभिषेक कर चुकने पर, सब लोगों ने हाथ जोडकर (यावत्) इस प्रकार कहना शुरू किया– हे समृद्ध! तेरी जय हो! जय हो! हे कल्याणकर! तेरी जय हो! जय हो! हे आनन्द देनेवाले तेरा कल्याण हो! जय हो! नहीं जीते हुओं पर विजय प्राप्त करो। जीते हुओं का भलीभाति पालन करो। कुलाचार को पालने वाले कुटुम्बियों मे निवास करो। नहीं जीते हुओं को जीतो, जीते हुए शत्रुओं का मित्र के समान पालन करो। जैसेकि मनुष्यों का भरत चक्रवर्ती ने पालन किया था। हस्तिशीर्ष नगर का तथा इस के सिवाय और और गाव, आकर (यावत) सन्निवेश का आधिपत्य करते हुए (यावत) आनन्द से रहो। इतना कह कर फिर जय २ शब्द किया॥ ६२ ॥

मूलम्— तते णं से सुबाहुकुमारे राया जाए, महया जाव विहरति, तए णं तस्स सुबाहुस्स रन्नो अम्मापियरो एवं वयासी— भण जाया! किं दलयामो किं पयच्छामो, किंवा ते हियइच्छिए सामत्थे (मंते)? तते णं से सुबाहू राया अम्मापियरो एवं वयासी— इच्छामि णं अम्मयाओ! कुत्तियावणाओ रयहरणं पडिग्गहगं च आणियं, कासवयं च सद्दावेउं। तते णं से अदीणसत्तू राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ। सद्दावेत्ता एवं वयासी— गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! सिरिघराओ तिन्नि सयसहस्साइं गहाय दोहिं सयसहस्सेहिं कुत्तियावणाओ रयहरणं पडिग्गहगं च उवणेह, सयसहस्सेणं कासवयं सद्दावेह। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा

अदीणसत्तुणा रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा सिरिघराओ तिन्नि सयसहस्साइं गहाय,कुत्तियावणाओ दोहिं सयसहस्सेहिं रयहरणं पडिग्गहं च उवणेंति। सयसहस्सेणं कासवयं सद्दावेंति। तते णं से कासवए तेहिं कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविए समाणे हट्ठ जाव हियए ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगल-पायच्छित्ते सुद्धप्पावेसाइं वत्थाइं मंगलाइं पवरपरिहिए अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे जेणेव अदीणसत्तू राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अदीणसत्तुं रायं करयलमंजलिं कट्टु एवं वयासी—संदिसह णं देवाणुप्पिया! जं मए करणिज्जं? तते णं से अदीणसत्तू राया कासवयं एवं वयासी—गच्छाहि णं तुमं देवाणुप्पिया! सुरभिणा गंधोदएणं णिक्के हत्थपाए पक्खालेह। सेयाए चउप्फालाए पोत्तीए मुहं बंधित्ता सुबाहुस्स कुमारस्स चउरंगुलवज्जे णिक्कमणपाउग्गे अग्गकेसे कप्पेहि। तते णं से कासवए अदीणसत्तुणा रण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठ जाव हियए जाव पडिसुणेइ, पडिसुणेत्ता सुरभिणा गंधोदएणं हत्थपाए पक्खालेइ। पक्खालेत्ता सुद्धवत्थेणं मुहं बंधइ। बंधित्ता परेणं जत्तेणं सुबाहुस्स कुमारस्स चउरंगुलवज्जे निक्खमणपाउग्गे अग्गकेसे कप्पेइ। तते णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स माया महरिहेणं हंसलक्खणेणं पडसाडएणं अग्गकेसे पडिच्छइ। पडिच्छित्ता सुरभिणा गंधोदएणं पक्खालेइ, पक्खालित्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं चचाओ दलयति, दलइत्ता सेयाए पोत्तीए बंधेति। बंधित्ता रयणसमुग्गयंसि पक्खिवति, पक्खिवित्ता मंजूसाए पक्खिववइ, पक्खिवित्ता हारवारिधारसिंदुवारछिन्नमुत्तावलिप्पगासाइं अंसूइं विणिम्मुयमाणी विणिम्मुयमाणी रोयमाणी

यमाणी कंदमाणी कंदमाणी विलवमाणी विलवमाणी एवं दासी— एस णं अम्हं सुबाहुस्स कुमारस्स अब्भुदएसु य स्सवेसु य पसवेसु य तिहीसु य छणेसु य जन्नेसु य पव्व-ोसु य अपच्छिमे दरिसणे भविस्सइत्ति कट्टु ऊसीसाम्-ः ठवेति ॥ ६३ ॥

भावार्थ—तदनन्तर, जब सुबाहुकुमार राजा होकर (यावत्) हाहिमवन पर्वत की नाईं श्रेष्ठ होकर विहार करने लगा, तब राजा बाहुकुमार के माता पिता बोले—पुत्र! कहो, तुम्हे क्या देवें? तुम्ह या इष्ट है जो दिया जाय? तुम हृदय मे क्या चाहते हो? राजा सुबाहु-मार माता पिता से बोले—हे माता पिता! मै कुत्रिक दूकान (देवता से धिष्ठित होने के कारण जहा तीन लोक की सब चीजें मिल सके उसे त्रिक दूकान कहते है) से रजोहरण और पात्र मगवाना चाहता हू और ाई को बुलवाना चाहता हू। तदनन्तर राजा अदीनशत्रु ने नौकरो को लाया और बोले—हे देवानुप्रिय! तुम जाओ और तीन लाख सिक्के जाने मे से जाकर कुत्रिक दूकान से दो लाख का रजोहरण और पात्र ले ाना तथा एक लाख देकर नाई को बुला लाना। सेवक लोगो ने राजा दीनशत्रु की आज्ञा सुनकर हर्षित और सन्तुष्ट होकर, खजाने मे तीन ाख सिक्के लेकर, कुत्रिक दूकान पर जाकर, दो लाख सिक्को से रजो-रण और पात्र लिया तथा एक लाख सिक्के देकर नाई को बुलाया। वकों द्वारा बुलाए हुए नाई ने भी हर्षित और सन्तुष्ट हृदय होकर स्नान या, कुलदेवता की पूजा की, कौतुक और मांगलिक प्रायश्चित्त (तिलक ादि) किये। राजसभा मे प्रवेश करने योग्य शुद्ध मांगलिक श्रेष्ठ वस्त्र हन, थोडे किन्तु बहुमूल्य आभरणों से शरीर को भूषित किया और जा अदीनशत्रु की ओर गया। वहा जाकर, हाथ जोड कर राजा अदीन-त्रु से इस प्रकार बोला—हे देवानुप्रिय! आज्ञा दीजिये, जो मुझे करना

है ? राजा अदीनशत्रु ने नाई से कहा—हे देवानुप्रिय! तुम जाओ और निर्मल सुगंधित गंधोदक से हाथ पैर साफ धोकर चार पड (पट्टी) वाले वस्त्र से मुँह बांध कर सुबाहुकुमार के दीक्षा के लायक चार अंगुल छोड़कर केशों के अग्रभाग काटो। राजा अदीनशत्रु की आज्ञा सुनकर नाई ने हर्षित (यावत्) हृदय होकर आज्ञा स्वीकार की स्वीकार करके सुगंध गन्धोदक से हाथ पैर धोए। धोकर शुद्ध वस्त्र से मुँह बांधा। मुँह बांधकर बड़े ही यत्न से चार अंगुल छोड़कर दीक्षा के योग्य, सुबाहुकुमार के केशों के अग्रभाग काटे। सुबाहुकुमार की माता ने बड़े आदमियों के योग्य, हंस जैसे सफेद या हंस के चिन्ह से शोभमान वस्त्र में उन कटे हुए केशों को रख लिए और सुगंध गंधोदक से उन्हें धोया। धोकर बावन चन्दन के छींटे दिये, और उसी सफेद वस्त्र मे बांधकर रत्नों के डिब्बे में रख लिए। उस डिब्बे को संदूक मे धर कर मोतियो की माला जल की धारा या निर्गुण्डी के फूल सरीखे सफेद आंसू डालती हुई रोती २ आक्रन्दन और विलाप करती हुई इस प्रकार बोली—हमे अभ्युदय के समय, उत्सव मे पुत्रादि के जन्मोत्सव में तिथियों मे इन्द्रादि के उत्सव के समय, पर्वो मे यही दर्शन सुबाहुकुमार का अन्तिम दर्शन होगा, ऐसा सोचकर उसने वह बालों की पेटी सिराने रख छोड़ी ॥ ६३ ॥

मूलम्— तते ण तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स अम्मापियरो उत्तरावक्कमणं सीहासणं रयावेंति, रयावेत्ता सुबाहुकुमारं दोच्चंपि तच्चंपि सेयपीयएहि कलसेहि ण्हावेंति, ण्हावेत्ता पम्हलसुउमालाए गंधकासाइयाए गायाइं लूहेंति, लूहित्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिपंति। अणुलिपित्ता नासानीसासवायवोज्झं जाव हंसलक्खणं पडगसाडगं नियंसेंति। नियंसित्ता हारं पिणद्धंति, पिणद्धित्ता अद्धहारं पिणद्धंति, पिणद्धित्ता एवं एगावलिं मुत्तावलिं कणगावलिं

रयणावलि पालंबं पायपलंबं कडगाइं तुडिगाइं केऊराइं अंगयाइं दस मुद्दियाणंतयं कडिसुत्तयं कुंडलाइं चूडामणि रयणुक्कडं मउडं पिणद्धंति, पिणद्धित्ता दिव्वं सुमणदामं पिणद्धंति, पिणद्धित्ता दद्दरमलयसुगंधिए गंधे पिणद्धंति। तते णं तं सुबाहुकुमारं गंथिमवेढिमपूरिमसंघाइमेणं चउव्विहेणं मल्लेणं कप्परुक्खगं पि व अलंकियविभूसियं करेंति। तते ण से अदीणसत्तू राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी — खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! अणेगखंभसयसन्निविट्ठं लीलट्ठियसालभंजियागं ईहामिय— उसभतुरगनरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं घंटावलिमहुरमणहरसरं सुभकंतदरिसणिज्जं णिउणोवचियमिसिमिसंतमणिरयणघंटियाजालपरिक्खित्तं अब्भुग्गयवइरवेइयापरिगयाभिरामं विज्जाहरजमलजंतजुत्तं पि व अच्चीसहस्समालणीयं रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं भिब्भिसमाणं चक्खुलोयणलेस्सं सुहफासं सस्सिरीयरूवं सिग्घं तुरियं चवलं वेइयं पुरिससहस्सवाहिणीं सीयं उवट्ठवेह। तते णं ते कोडुंबियपुरिसा हट्ठतुट्ठ जाव उवट्ठावेंति। तते णं से सुबाहू कुमारे सीयं दुरूहइ, दुरूहित्ता सीहासणवरगते पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने ॥ ६४ ॥

भावार्थ—तदनन्तर, सुबाहुकुमार के माता पिता ने उत्तर दिशा में एक सिंहासन रखवाया। रखवाकर सुबाहुकुमार को उस पर बैठा कर दो तीन बार सफेद और पीले (चांदी सोने के) कलशों से स्नान कराया। स्नान करा चुकने पर रुएँदार सुकोमल सुगंधित रंगीन वस्त्र से शरीर पोंछा। शरीर पोंछकर सरस बावन चन्दन का लेप किया। लेप करके

नाक के निःश्वास की हवा से उड़ने वाला—बहुत पतला—(यावत्) हंस जैसा स्वच्छ वस्त्र पहनाया। पहनाकर, हार (अठारह लड़ों का) और अर्ध हार पहनाया, तथा एकावलि मुक्तावलि कनकावलि रत्नावलि हार पहनाए। पैरों तक लटकने वाला लम्बा हार, कड़े तुटिका (बाहु-रक्षिका) भुजबन्ध दशों अंगुलियों में दश मुद्रिकाएँ, कन्दोरा कुंडल चूड़ामणि (मस्तक में लगाने का रत्न) और रत्न से जड़ा हुआ मुकुट पहनाया। पहनाकर दिव्य फूलमाला पहनाई। पहनाकर मलयपर्वत पर पैदा होने वाले चन्दन का अतर लगाया, तदनन्तर सुबाहुकुमार को सूत आदि से गूंथी हुई फूलों की गेंद सरीखी गाँठ कर लपेटी हुई, पूरिम और फूलों के परस्पर संयोग से बनाई हुई इन चार तरह की मालाओं से कल्पवृक्ष की तरह अलंकृत और विभूषित किया। पश्चात् राजा अदीनशत्रु ने नौकरों को बुलाकर कहा—हे देवानुप्रिय! सैकड़ों खंभों वाली लीला करती हुई अनेक पुतलियों से युक्त भेड़िया बैल घोड़ा नर मगर पक्षी सर्प किन्नर रुरु (मृग विशेष) अष्टापद चमरी गाय हाथी वनलता और पद्म लता के चिन्हों से शोभमान, घंटियों के मनोहर शब्दों से शब्दायमान, शुभ सुन्दर और दर्शनीय, चतुर कारीगरों द्वारा बनाई हुई, देदीप्यमान मणि और रत्नों की बनी हुई घंटियों के समुदाय से व्याप्त वज्र का बना हुआ ऊँची वेदी से युक्त, मनोहर विद्याधर की चलती फिरती पुतलियों के जोड़े से युक्त (चित्रित) हजार किरणों वाली और प्रकाशित हजार रूपों से युक्त चमकती हुई—खूब चमकती हुई, अतिशय दर्शनीय सुखद स्पर्श वाली सश्रीक रूप वाली शीघ्र—अति शीघ्र चलने वाली, चपल, वेग वाली एक हजार पुरुषों से उठाई जाने वाली पालकी ले आओ। यह सुनकर सेवक लोग हर्षित और सन्तुष्ट होकर (यावत्) पालकी ले आये। सुबाहुकुमार उस पर चढ़ कर पूर्व दिशा की ओर मुँह करके वेदी पर बैठ गया॥ ६४॥

मूलम्—तते णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स माया ण्हाया कयबलिकम्मा जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा सीयं दुरूहइ, दुरूहित्ता सुबाहुस्स कुमारस्स दाहिणे पासे भद्दासणंसि निसीयइ। तते णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स अंबधाई रयहरणं पडिग्गहगं च गहाय सीयं दुरूहइ, दुरूहित्ता सुबाहुस्स कुमारस्स वामे पासे भद्दासणंसि निसीयति। तते णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स पिट्ठओ एगा वरतरुणी सिंगारागारचारुवेसा संगयगयहसियभणियचिट्ठियविलाससंलावुल्लावनिउणजुत्तोवयारकुसला आमेलगजमलजुयलवट्टियअब्भुन्नयपीणरतियसंठियपयोहरा हिमरययकुंदेंदुपगासं सकोरेंट मल्लदामधवलं आयवत्तं गहाय सलीलं ओहारेमाणी ओहारेमाणी चिट्ठइ। तते णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स दुवे वरतरुणीओ सिंगारागारचारुवेसाओ जाव कुसलाओ सीयं दुरूहंति, दुरूहित्ता सुबाहुस्स कुमारस्स उभओ पासं नाना-मणिकणगरयणमहरिहतवणिज्जुज्जलविचित्तदंडाओ चिल्लियाओ सुहुमवरदीहवालाओ संखकुंददगरयअमयमहियफेणपुंजसन्निगासाओ चामराओ गहाय सलीलं ओहारेमाणीओ ओहारेमाणीओ चिट्ठंति। तते णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स एगा वरतरुणी सिंगारा जाव कुसला सीयं जाव दुरूहति, दुरूहित्ता सुबाहुस्स कुमारस्स पुरओ पुरत्थिमेणं चंदप्पभवइरवेरुलियविमलदंडं तालियंटं गहाय चिट्ठति। तते णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स एगा वरतरुणी जाव सुरूवा सीयं दुरूहति। दुरूहित्ता सुबाहुस्स कुमारस्स पुव्वदक्खिणेणं सेयं रययामयं विमलसलिलपुन्नं मत्तगयमहामुहाकितिसमाणं भिंगारं गहाय चिट्ठइ, तते णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स पिया

कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति, सद्दावेत्ता एवं वदासी-- खिप्पा-मेव भो देवाणुप्पिया! सरिसयाणं सरित्तयाणं सरिव्वयाणं एगाभरणगहियनिज्जोयाणं कोडुंबियवरतरुणाणं सहस्सं सद्दावेह। जाव सद्दावेति, तते णं ते कोडुंबियवरतरुणपुरि-सा अदीणसत्तुस्स रन्नो कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्टा ण्हाया जाव एगाभरणगहियणिज्जोया जेणामेव अदी-णसत्तू राया तेणामेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता अदीण-सत्तु रायं एवं वदासी-- संदिसह णं देवाणुप्पिया ! जन्नं अम्हेहिं करणिज्जं। तते णं से अदीणसत्तू राया तं कोडुंबिय-वरतरुणसहस्सं एवं वयासी-गच्छह णं देवाणुप्पिया! सुबा-हुस्स कुमारस्स पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं परिवहेह। तते णं तं कोडुंबियवरतरुणसहस्सं अदीणसत्तुणा रण्णा एवं वुत्तं संतं हट्टतुट्टं सुबाहुस्स कुमारस्स पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं परिवहइ। तए णं सुबाहुस्स कुमारस्स पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं दुरूढस्स समाणस्स इमे अट्ठमंगलयातप्पढमयाए पुर-ओ अहाणुपुव्वीए संपत्थिया। तं जहा-- सोत्थिय १ सिरी-वच्छ २ णंदियावत्त ३ वद्धमाणग ४ भद्दासन ५ कलस ६ मच्छ ७ दप्पण ८, जाव बहवे अत्थत्थिया जाव ताहिं इट्ठा-हिं जाव अनवरयं अभिणंदंता य अभिथुणंता य एवं वया-सी-- जय जय नंदा ! जय जय भद्दा ! जय नंदा ! भद्दं ते, अजियाइं जिणाहि इंदियाइं, जियं च पालेहि समणधम्मं, जियविग्घो वि य वसाहि तं देव ! सिद्धिमज्झे, णिहणाहि रागदोसमल्ले, तवेणं धितिधणियबद्धकच्छे मद्दाहि य अट्ठक-म्मसत्तू झाणेणं उत्तमेणं सुक्केणं, अप्पमत्ते पावय, वितिमिरमणुत्तरं केवलं नाणं, गच्छय परमपयं सासयं च अयलं

हंता परीसहचमुं णं, अभीओ परीसहोवसग्गाणं धम्मे ते अविग्घं भवउत्ति कट्टु पुणो पुणो मंगलजयजयसद्दं पउं-जंति। तते णं से सुयाहुकुमारे हत्थिसीसस्स नगरस्स मज्झं-मज्झेणं निग्गच्छइ । निग्गच्छित्ता जेणेव पुप्फकरंडे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पुरिससहस्सवाहिणीओ सीयाओ पच्चोरुहइ । तते णं तस्स सुयाहुस्स कुमारस्स अम्मापियरो सुबाहुं कुमारं पुरओ कट्टु जेणामेव समणे भगवं महावीरे तेणामेव उवागच्छइ । उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति, करेत्ता वंदंति नमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी--॥ ६५ ॥

भावार्थ-- तदनन्तर, सुबाहुकुमार की माता स्नान करके गृहदेवता की पूजा करके (यावत्) थोडे किन्तु बहुमूल्य वाले अलंकारों से शरीर को अलंकृत करके पालकी पर सवार हुई। सवार होकर सुबाहुकुमार की दाहिनी ओर, भद्रासन पर बैठ गई। इसके बाद सुबाहुकुमार को दूध पिलाने वाली धाय रजोहरण और पात्र लेकर पालकी पर चढी और सुबाहु-कुमार की बाई ओर भद्रासन पर बैठी। पश्चात् एक उत्तम तरुणी (जवान स्त्री) सुबाहुकुमार के पीछे बैठी । वह ऐसी जान पड़ती, मानो सिंगार का आगार ही हो। उसका वेष सुन्दर था। वह चलने में, हँसने में, बोलने में, चेष्टा करने में, विलास (नेत्र के विकार) में, संलाप और उल्लाप में निपुण, तथा लोकव्यवहार में चतुर थी। उसके कुछ २ आपस में मिले हुए, समश्रेणी में रहे हुए दोनों स्तन गोल ऊंचे मोटे सुख देने वाले और विशेष (सुन्दर) आकार वाले थे। वह युवती वर्फ चादी कुंद के पुष्प या चन्द्रमा के समान कान्ति वाले कोरंट वृक्ष के फूलों के गुच्छों की मालाओं से युक्त, सफेद छत्र को लेकर, उसे लीला पूर्वक धारण किये हुए थी। इसके अनन्तर सिंगार के भंडार के समान सुन्दर वेष वाली दो तरुण स्त्रियाँ

पालकी पर चढ़कर सुबाहुकुमार की दोनों ओर आकर, नाना मणि सुवर्ण रत्न और बहुमूल्य लाल सोने से युक्त उज्ज्वल डंडी वाले, तथा चमक पैदा करने वाले, चमकदार, पतले उत्तम और लम्बे बालों वाले, शंख कुंद के फूल पानी की छोटी सी बूंद (कण) मथे हुए अमृत के फेन के पुंज की तरह सफेद चँवरों को लेकर, लीला पूर्वक ढोरती हुई ठहरीं। पश्चात् शृंगार के आगार की नाईं -- यावत् शृंगार किये हुए-- यावत् कुशल एक उत्तम तरुणी (यावत्) सुबाहुकुमार के समीप पालकी पर सवार हुई। सवार होकर सुबाहुकुमार के सामने, पूर्व दिशा में खड़ी होकर, चन्द्रकान्त मणि और वैडूर्य मणि से जड़े हुए डंडे वाले बीजने को लेकर ठहरी। फिर शृंगार किये हुए एक और सुन्दर तरुणी सुबाहुकुमार के समीप पालकी पर चढ़कर, सुबाहुकुमार से पूर्व दक्षिण-- आग्नेय -- दिशा में खड़ी होकर, निर्मल जल से भरे हुए, मदोन्मत्त हाथी के बड़े मुंह के जैसे आकार वाले चांदी के भृंगार (झारी) को लेकर ठहरी। इसके बाद सुबाहुकुमार के पिता राजा अदीनशत्रु ने सेवकों को बुला कर कहा-- हे देवानुप्रिय! समान, समान रंग के, समान उम्र के, समान पोशाक (या आभरण) वाले एक हजार जवान सेवकों को शीघ्र बुला लाओ। (यावत्) सेवकों ने उन्हें बुलाया। तब वे अच्छे एक हजार जवान पुरुष राजा अदीनशत्रु के आदमियों के बुलाने पर हर्षित होकर, स्नान करके (यावत्) एक ही सरीखे आभरणों को धारण करके, जिस ओर महाराज अदीनशत्रु थे, उसी ओर आये। आकर महाराज अदीनशत्रु से बोले-- हे देवानुप्रिय! आज्ञा दीजिये, हमें क्या करना है? राजा अदीनशत्रु ने उन एक हजार तरुण सेवकों से कहा-- देवानुप्रिय! जाओ, पुरुषसहस्रवाहिनी (एक हजार आदमियों से चलाई जाने वाली) सुबाहुकुमार की पालकी को उठाओ। उन एक हजार आदमियों ने अदीनशत्रु राजा की आज्ञा सुनकर हर्षित और सन्तुष्ट होकर, सुबाहुकुमार की पुरुषसहस्रवाहिनी पालकी उठाई।

पालकी उठाने के बाद, पुरुषसहस्रवाहिनी पालकी पर आरूढ हुए सुबाहुकुमार के आगे आगे क्रम से ये आठ मांगलिक द्रव्य चले--- १ स्वस्तिक (साथिया) २ श्रीवत्स ३ नंदावर्त ४ वर्द्धमान ५ सिंहासन ६ पूर्ण कलश ७ मत्स्य युगल और ८ दर्पण। (यावत) बहुत से याचक (यावत) इष्ट वचनों से (यावत) बारम्बार अभिनंदन और स्तुति करते हुए इस प्रकार बोले--- "हे समृद्ध! तुम्हारी जय हो! जय हो! हे भद्र! तुम्हारी जय हो! जय हो! हे आनन्द देने वाले! तेरा कल्याण हो! जय हो! नहीं जीती हुई इन्द्रियों को जीतो। विघ्नों को पार करके परम्परा से चले आये हुए श्रमणधर्म का पालन करो। हे देव! सिद्धि को प्राप्त करो। तप के द्वारा राग द्वेष रूपी मल्लों का निग्रह करो। अत्यन्त धीरता के साथ, कमर कस कर आठ कर्म रूपी शत्रुओं का मर्दन करो। उत्तम शुक्लध्यान से अप्रमत्त होकर देदीप्यमान और सर्वोत्कृष्ट केवलज्ञान प्राप्त करके, परम पद नित्य और अचल मोक्ष में जाओ। परिषह रूपी सेना को जीतकर, परिषह और उपसर्गों में निर्भय होओ! तुम्हारा साधु धर्म निर्विघ्न होवे"। इस प्रकार बारम्बार मांगलिक जय जयकार करने लगे। पश्चात् सुबाहुकुमार हस्तिशीर्ष नगर के बीचोंबीच होकर निकला। निकलकर जिस ओर पुष्पकरण्डक उद्यान था, उसी ओर आया। आकर पुरुषसहस्रवाहिनी पालकी से उतरा। उतरने के बाद, सुबाहुकुमार के माता पिता, सुबाहुकुमार को आगे करके, श्रमण भगवान् महावीर की ओर आये। आकर श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार प्रदक्षिणा करके वन्दना और नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार करके बोले-- ॥ ६५ ॥

मूलम्— एस णं देवाणुप्पिया! सुबाहुकुमारे अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते पिए मणुन्ने मणामे वीसासिए जीवियऊसासए हिययणंदिजणए उंबरपुप्फं पि व दुल्लहे सवणयाए, किमंग पुण पासणयाए, से जहानामए उप्पलेति वा पउमेति वा

कुमुदेति वा पंके जाए, जले संवड्ढिए नोवलिप्पइ पंकरएणं, नोवलिप्पइ जलरएणं एवामेव सुबाहुकुमारे कामेसु जाए, भोगेसु संवड्ढिए, णोवलिप्पइ कामरएणं णोवलिप्पइ भोगरएणं, एस णं देवाणुप्पिया! संसारभउव्विग्गे, भीए जम्मणजरामरणाणं, इच्छइ देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए। अम्हे णं देवाणुप्पियाणं सिस्सभिक्खं दलयामो। पडिच्छंतु णं तुम्हे देवाणुप्पिया! सिस्सभिक्खं। तते णं समणे भगवं महावीरे सुबाहुस्स कुमारस्स अम्मापिऊहिं एवं वुत्ते समाणे एयमट्ठं सम्मं पडिसुणेइ। तते णं से सुबाहुकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमति, अवक्कमित्ता सयमेव आभरणमल्लालंकारं उम्मुयइ। तते णं से सुबाहुकुमारस्स माया हंसलक्खणेणं पडगसाडएणं आभरणमल्लालंकारं पडिच्छइ,पडिच्छित्ता हारवारिधारसिंदुवारछिन्नमुत्तावलिप्पगासाइं अंसूणि विणिम्मुयमाणी विणिम्मुयमाणी, रोयमाणी रोयमाणी, कंदमाणी कंदमाणी, विलवमाणी विलवमाणी, एवं वयासी— जतियव्वं जाया! घडियव्वं जाया! परिक्कामियव्वं जाया! अस्सिं च णं अट्ठे नो पमाएयव्वं। अम्हं पि णं एवमेव मग्गे भवउ त्ति कट्टु. सुबाहुस्स कुमारस्स अम्मापियरो समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति,वंदित्ता नमंसित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया। तते णं से सुबाहुकुमारे पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, करेत्ता जेणामेव समणे भगवं महावीरे तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करेत्ता वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी— ॥ ९९ ॥

भावार्थ— हे देवानुप्रिय! यह सुबाहुकुमार हमारा इकलौता पुत्र है। यह इष्ट कान्त प्रिय मनोज्ञ मनोरम विश्वासपात्र जीवन का श्वास तथा हृदय को आनन्द देने वाला है। ऊमर के फूल की नाईं देखना तो दूर रहा, इसका नाम सुनना भी दुर्लभ है। नीला उत्पल कमल (सूर्य विकाशी) कुमुद (चन्द्र विकाशी) कीचड में उत्पन्न होकर और जल में बढ़ कर भी जैसे उनमें लिप्त नहीं होते, उसी प्रकार सुबाहुकुमार ने कामों में ही जन्म लिया है, भोगोपभोगों में यह बडा हुआ है (इसका लालन पालन हुआ है) किन्तु यह काम और भोगोपभोगों में लिप्त नहीं हुआ है। हे देवानुप्रिय! यह ससार से उद्विग्न और जन्म जरा मरण से डरा हुआ है। इसलिए आपके पास मुण्डित होकर गृहस्थावस्था त्यागकर मुनि-दीक्षा लेना चाहता है, और हम आपको शिष्य की भिक्षा देते है। हे देवानुप्रिय! आप शिष्य-भिक्षा को स्वीकार कीजिये। सुबाहुकुमार के माता पिता के इस कथन को श्रमण भगवान् महावीर ने अच्छी तरह सुना। सुबाहुकुमार श्रमण भगवान् महावीर के समीप ईशान कोण में आया। वहा आकर अपने आप आभरण फूलमाला और अलकारो को उतार दिया, और सुबाहुकुमार की माता ने हस के ऐसे स्वच्छ वस्त्र में उन्हे ले लिया। तथा हार जल की धारा सिंदुवार (निर्गुंडी) के फूलों या हार से टूटे हुए मोतियों की तरह आसू ढारती २ रोती २ क्रदन करती २ विलाप करती २ बोली—हे पुत्र! सयम में यत्न करना। हे पुत्र! अप्राप्त वस्तु (गुण) को प्राप्त करना। हे पुत्र! सयम में पराक्रम करना और इस विषय मे प्रमाद न करना। हमारा भी यही मार्ग होवे। इस प्रकार कह कर सुबाहुकुमार के माता पिता श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना नमस्कार करके, जिस ओर से आये थे, उसी ओर वापस लौट गये। उनके लौट जाने पर, सुबाहुकुमार ने अपने हाथों से पचमुष्टि लोच करके, जिधर श्रमण भगवान् महावीर थे, उसी तरफ़ जाकर श्रमण भगवान् महावीर की तीन बार प्रदक्षिणा करके वन्दना

और नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार करके बोला---॥ ६६ ॥

मूलम्— आलित्ते णं भंते! लोए, पलित्ते णं भंते! लोए, आलित्तपलित्ते णं भंते! लोए जराए मरणेण य, से जहा नामए केई गाहावती आगारंसि झियायमाणंसि जे तत्थ भंडे भवति अप्पभारे मोल्लगुरुए तं गहाय आयाए एगंतं अवक्कमइ, एस मे णित्थारिए समाणे पच्छा पुरा हियाए सुहाए खेमाए निस्सेसाए अणुगामियत्ताए भविस्सइ, एवामेव ममवि एगे आया भंडे इट्ठे कंते पिए मणुन्ने मणामे एस मे निच्छारिए समाणे संसारवोच्छेयकरे भविस्सइ, तं इच्छामि णं देवाणुप्पिएहिं सयमेव पव्वावियं, सयमेव मुंडावियं सेहावियं सिक्खावियं सयमेव आयारगोयरविणयवेणइयचरणकरणजायामायावत्तियं धम्ममाइक्खियं। तते णं समणे भगवं महावीरे सुबाहुकुमारं सयमेव पव्वावेइ, सयमेव मुंडावेइ, सयमेव आयार जाव धम्ममाइक्खइ। एवं देवाणुप्पिया! गंतव्वं चिट्ठियव्वं निसीयव्वं तुयट्टियव्वं भुंजियव्वं भासियव्वं एवं उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भूतेहिं जीवेहिं सत्तेहिं संजमेणं संजमियव्वं, अस्सिं च णं अट्ठे णो पमादेयव्वं। तते णं से सुबाहुकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं निसम्म सम्मं पडिवज्जइ। तमाणाए तह गच्छइ तह चिट्ठइ जाव उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहि संजमेइ[1] ॥ ६७ ॥

भावार्थ— हे भगवन्! यह संसार जरा और मरण रूपी अग्नि से जल रहा है, सब जल रहा है और हे भगवन्! चारों ओर से अत्यन्त जल

१ ज्ञाता० अ० १ प. ६० पृ. २ प. १२ तक

रहा है। जैसे कोई सेठ, घर में आग लगने पर, घर मे रक्खे हुए थोडे बोझे वाली किन्तु बहुमूल्य चीजों को लेकर स्वय एकान्त मे जाकर सोचता है— कि मेरे द्वारा निकाली हुई ये चीजे इस लोक मे, आगामी काल में हित के लिए, सुख के लिए क्षेम के लिए निश्रेयस (कल्याण) के लिए होगी, इसी प्रकार मेरा आत्मा भी एक भाड (उपकरण) है, यही इष्ट कान्त प्रिय मनोज्ञ और मनोरम है। मैं आत्मा को जलते हुए ससार से निकालूगा, तो यह संसार (कर्म सहित अवस्था) का नाश करने वाला होगा। इसलिए मै आज से स्वय दीक्षा लेना, स्वय मुण्डित होना, स्वय प्रतिलेखना आदि क्रियाओं को ग्रहण करना, स्वयं सूत्र अर्थ सीखना, तथा आचार गोचरी विनय विनय का फल कर्म क्षय आदि, चारित्र, करण (आहारादि की शुद्धि आदि) सयम की यात्रा, मात्रा (आहार आदि का परिमाण) धर्म-कथा आदि वृत्ति वाले धर्म को धारण करना चाहता हू।

इसके अनन्तर श्रमण भगवान् महावीर ने सुबाहुकुमार को स्वयं ही दीक्षा दी, स्वयमेव मुण्डित किया, स्वयमेव आचारादि धर्म की इस प्रकार शिक्षा दी— हे देवानुप्रिय! ईर्या समिति से चलना चाहिए, निर्दोष पृथिवी पर ठहरना चाहिए, पृथिवी को प्रमार्जन करके बैठना चाहिए, भुजा को तकिया बना कर, सम्तारक के ऊपर एक कपडा बिछा कर शरीर की प्रमार्जना करके सामायिक आदि का उच्चारण करके सोना चाहिए, निर्दोष भोजन करना चाहिए, हित मित प्रिय बचन बोलना चाहिए, इस प्रकार प्रमाद और निद्रा का त्याग कर भूत (सब वनस्पति) जीव (पंचेन्द्रिय) सत्व (पृथ्वी पानी अग्नि और वायु) की सयम पूर्वक रक्षा करनी चाहिए। सुबाहुकुमार ने श्रमण भगवान् महावीर के समीप इस धर्मोपदेश को सुनकर सम्यक प्रकार अंगीकार किया। वह पूर्वोक्त आज्ञानुसार ही चलता, उठता बैठता निद्रा और प्रमाद को त्याग कर के प्राण भूत जीव और सत्वों की रक्षा करता था॥ ६७॥

मूलम्— तते णं से सुबाहुकुमारे अणगारे जाते इरियासमिए जाव बंभचारी। तते णं से सुबाहू अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्झेति, अहिज्झित्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम ० जाव तवोविहाणेहिं अप्पाणं भावेत्ता बहूहिं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिभत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववण्णे। से णं तती देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिति, लभित्ता केवलं बोहिं बुज्झिहिति, बुज्झित्ता तहारूवाणं। थेराणं अंतिए मुंडे भवित्ता जाव पव्वइस्सति। से णं तत्थ बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणित्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालगए सणंकुमारे देवत्ताए उववन्ने। से णं ताओ देवलोगाओ तहेव माणुस्सं पव्वज्जा, तहेव महासुक्के, ताओ देवलोगाओ तहेव माणुस्सं पव्वज्जा तहेव आणाए ताओ देवलोगाओ तहेव मणुस्सं पव्वज्जा, तहेव आरणाए, ताओ देवलोगाओ तहेव माणुस्सं पव्वज्जा, तहेव सव्वट्टसिद्ध, से णं देवलोगाओ अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिति, कहिं उववज्जिहिति ? गोयमा! महाविदेहे वासे जाइं इमाइं कुलाइं भवंति, अड्ढाइं दित्ताइं वित्ताइं विच्छिण्णविउलभवणसयणासणजाणवाहणाइं बहुधणबहुजातरूवरययाइं आओगपओगसंपउत्ताइं विच्छड्डियपउरभत्तपाणाइं बहुदासीदासगोमहिसगवेलगप्पभूयाइं बहुजणस्स अपरिभूयाइं तहप्पगारेसु कुलेसु पुमत्ताए पच्चायाहिति।

तए णं तस्स दारगस्स माया नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं सुरूवं दारयं पयाहिति, जहेव पुव्वं तहेव नेयव्वं जाव*भोग-रएणं नोवलिप्पइ। तहेव मित्तनाइनियगसंबंधि-परिजणेणं, से णं तहारूवाणं थेराणं अंतिए केवलं बोहिं बुज्झिहिति। केवल मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइस्सति। से णं अणगारे भविस्सति, इरियासमिए जाव सुहुयहुयासणो इव तेयसा जलंते। तस्स णं भगवओ अणुत्तरेणं नाणेणं एवं दंसणेणं चरित्तेणं आलएणं विहारेणं अज्जवेणं मद्दवेणं लाघवेणं खंतीए गुत्तीए मुत्तीए अणुत्तरेणं सव्व-संजमतवसुचरियफलनिव्वाणमग्गेणं अप्पाणं भावेमाणस्स अणंते अणुत्तरे कसिणे पडिपुण्णे निरावरणे निव्वाघाए केवलवरनाणदंसणे समुप्पज्जिहिति। तते णं से भगवं अरहा जिणे केवली भविस्सइ। सदेव मणुयासुरस्स लोगस्स परियागं जाणिहिइ पासिहिइ, तं जहा— आगतिं गतिं ठितिं चवणं उववायं तक्कं पच्छाकडं पुरेकडं मणो— माणसियं खइयं भुत्तं कडं पडिसेवियं आवीकम्मं रहोकम्मं अरहा अरहस्स भागी तं तं कालं मणवयकायजोगे वट्टमाणाणं सव्वलोए सव्वजीवाणं सव्वभावे जाणमाणे पासमाणे विहरिस्सइ। तते णं से सुबाहू केवली एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणे बहूइं वासाइं केवलिपरियागं पाउणित्ता अप्पणो आउसेसं आभोएत्ता बहूइं भत्ताइं पच्चक्खाइस्सइ, पच्चक्खाइत्ता बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदिस्सइ, छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावे मुंडभावे केसलोचे बंभचेरवासे अण्हाणगं अदंतवणं अछत्तगं अणुवाहणगं भूमिसिज्जाओ फलहसिज्जा-

* रायप. प. १४९ प ४ से।

ओ परघरपवेसो लद्धावलद्धाइं माणावमाणाइं परेहिं हीलणा-ओ निंदणाओ खिंसणाओ गरहणाओ तज्जणाओ तालणा-ओ परिभवणाओ पव्वहणाओ उच्चावया विरूवा वावीसं परीसहोवसग्गा गामकंटगा अहियासेज्जंति तमट्ठं आराहेइ, आराहित्ता चरमेहिं ऊसासनीसासेहिं सिज्झिहिइ, बुज्झिहिइ मुच्चिहिइ परिनिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणमंतं करेहिइ। सेवं भंते! सेवं भंते! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति णमंसति, वंदित्ता णमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे *विहरति। एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं सुह-विवागाणं पढमज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्तेत्ति बेमि ॥ ६८ ॥

पढमज्झयणं समत्तं।

भावार्थ—अब सुबाहुकुमार मुनि ईर्यासमिति से युक्त (यावत) ब्रह्मचारी हुआ। तदनन्तर सुबाहुकुमार मुनि ने श्रमण भगवान् महावीर जैसे ईर्यासमिति आदि के पालनेवाले स्थविरों के समीप सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। अध्ययन करके बहुत से चतुर्भक्त (उपवास) षष्ठभक्त (बेला) वगैरह (यावत) नाना प्रकार के तपों द्वारा आत्मा का चिन्तन करके, बहुत वर्षों तक श्रामण्यपर्याय (मुनि-अवस्था) का पालन करके एक मास की संलेखना करके आत्मचिन्तन करते हुए एक महीने का अनशन करके, आलोचना और प्रतिक्रमण करके, समाधि पूर्वक आयु पूर्ण होने पर काल करके सौधर्मकल्प में (प्रथम देव-लोक में) देव होगा। तदनन्तर वह सुबाहुकुमार का जीव पहले देवलोक से आयुक्षय भवक्षय और स्थितिक्षय करके मनुष्य होगा। फिर जैनधर्म को समझकर उसी प्रकार के स्थविरों के समीप मुण्डित

---

*राय० प० २९५ पं. ६ तक।

होकर (यावत्) दीक्षा लेलेगा। वहा बहुत वर्षों तक साधु–पर्याय को पालकर आलोचना और प्रतिक्रमण करके समाधिमरण करके सनत्कुमार देवलोक मे देव उत्पन्न होगा। फिर वह तीसरे स्वर्ग से उसी प्रकार मनुष्य भव पाकर दीक्षा लेकर ब्रह्मलोक मे देव होगा। फिर उस देव-लोक से उसी तरह मनुष्य भव पाकर, दीक्षा लेकर, उसी तरह महाशुक्र स्वर्ग मे देव होगा। उस स्वर्ग से उसी प्रकार मनुष्य होकर, दीक्षा लेकर आनत स्वर्ग मे देव होगा उस देवलोक से चयकर मनुष्य होकर, दीक्षा लेकर उसी प्रकार आरण स्वर्ग में देव होगा। उससे चयकर मनुष्य भव पाकर दीक्षा ले कर सर्वार्थसिद्धि में देव होगा। उस देवलोक से चय कर सीधा कहा जायगा? कहा उत्पन्न होगा? हे गौतम! महाविदेह क्षेत्र में धनादि से परिपूर्ण, प्रतापी, दानादि गुणों से प्रसिद्ध, तथा जिन मे वि-स्तीर्ण और बहुत से भवन शयन आसन यान वाहन है और बहुत ध-नाढ्य–चादी सोने वाले है, जिन मे लेन देन या व्याज आदि का काम होता है. भोजन पान का बहुत दान दिया जाता है, बहुत से दासी दास गाय भैंस बैल आदि है, बहुत आदमी भी जिनका अपमान नहीं कर सकते—ऐसे कुलों मे महा पुरुष रूप से जन्म लेगा। तदनन्तर उस बालक की माता पूरे नव महीने वीत जाने पर (यावत्) सुन्दर बालक का प्रसव करेगी। जन्म आदि का वर्णन जैसा पहले किया था, उसी प्रकार समझ लेना चाहिए। (यावत्) वह बालक भोग–रज से लिप्त नहीं होगा। पहले कहे अनुसार मित्र जाति सगे सम्बन्धियों और नौकर चाकरों मे भी मोहित नहीं होगा। तदनन्तर वह सुबाहुकुमार का जीव उसी प्रकार के स्थविरों के समीप केवलि–धर्म को समझकर, मुण्डित होकर गृहस्थावस्था को त्यागकर मुनि दीक्षा से दीक्षित होगा। वह अनगार होगा। ईर्या आदि समितियों से युक्त होकर (यावत्) अच्छी तरह जाज्वल्यमान अग्नि की नाई तेज-से देदीप्यमान होकर

भगवान् के कहे हुए सर्वोत्तम ज्ञान दर्शन और चारित्र से भूषित होकर, उपाश्रय छोड़कर विहार करते हुए, आर्जव मार्दव लाघव शान्ति गुप्ति और मुक्ति (निर्लोभता) सत्य संयम तप चारित्र और इनके फल रूप मोक्ष के मार्ग द्वारा आत्मा को भावना करता हुआ, अनन्त अनुत्तर अव्याघात निरावरण परिपूर्ण उत्तम केवलज्ञान और केवलदर्शन वाला होगा। तब वह अर्हन जिन और केवली होगा। देवलोक मनुष्यलोक और असुरलोक (अधोलोक) की समस्त पर्यायों को जानेगा देखेगा। अर्थात् — जीव जहां से आया जाया करते हैं, भव-स्थिति, च्यव (पर्याय का त्याग) उत्पत्ति, विचार, आगे किया जाने वाला, पीछे किया हुआ, मन से सोचा हुआ नष्ट हुआ, भोगा हुआ किया हुआ, सेवन किया हुआ, प्रगट और गुप्त कामों को जानता देखता। सर्वथा एकान्त में नहीं रहने वाला, देव और मनुष्य से निरन्तर सेवित होकर समस्त जीवों के हर समय होने वाले मन वचन काय सम्बन्धी सब भावों को जानता हुआ देखता हुआ विहार करेगा।

अनन्तर, सुबाहु केवली इस प्रकार विहार करते हुए बहुत वर्षों तक केवली अवस्था में रहकर, अपने आयुकर्म का अन्त जानकर अनेक भक्त-प्रत्याख्यान द्वारा अनशन करेंगे। करके जिनके लिए—नग्नता मुण्डितपन केशलोच करना ब्रह्मचर्य पालन, स्नान न करना, दातन न करना, छत्र न धारण करना, जूता न पहनना, धरती पर सोना चतुर्मास में पाटे पर सोना भिक्षा के लिए घर घर में गमन, कभी भोजन का मिलना कभी न मिलना आदर अनादर में समभाव रखना, दूसरों के नीच वचन सुनना, निन्दित होना, लोगों के सामने तिरस्कार के वचन सुनना, घृणा सहना, अंगुलि उठाकर कहे गये अपशब्द सुनना कोड़े आदि की मार सहना, तिरस्कार और पीड़ा सहना, छोटी बड़ी अनेक प्रकार की परिषह और उपसर्ग जो कि इन्द्रियों को कटक रूप है, ये

सन—सहन किये जाते है, उस पदार्थ (मोक्ष) का आराधन करेंगे, आराधन करके अन्तिम श्वास लेकर सिद्ध (कृतकृत्य होंगे, बुद्ध होंगे, आठ कर्मों से मुक्त होंगे, निर्वाण (कर्म रूप अग्नि के शान्त होने से शान्ति) प्राप्त करेंगे और सब दुखों का अन्त करेंगे। गौतम गणधर बोले—हे भगवन्! ऐसा ही है ऐसा ही है। इतना कहकर श्रमण भगवान् महावीर की वन्दना और नमस्कार करके संयम और तप से आत्मा की भावना करते हुए विहार करने लगे।

हे जम्बू! इस प्रकार श्रमण भगवान् महावीर ने (यावत्) मोक्ष जाते हुए सुखविपाक के प्रथमाध्ययन का यह अर्थ प्ररूपण किया है।

मैने (सुधर्मा स्वामी ने) जैसा श्री श्रमण भगवान् महावीर से सुना है, वैसा कहा है ॥ ६८ ॥



इस प्रकार सुखविपाकसूत्र में सुबाहुकुमार

अनगार का वर्णन करने वाला

प्रथम-अध्ययन

समाप्त

हुआ



द्वितीय अध्ययन।

मूलम्— बिनियस्स णं उक्खेवो—

एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभपुरे णगरे थूभकरंडउज्जाणे, धन्नो जक्खो, धणावहो राया, सरस्सई देवी, सुमिणदंसणं, कहणं, जम्मणं बालत्तणं कलाओ य, जुव्वणे, पाणिग्गहणं दाओ पासाद ० भोगा य जहा सुबाहुस्स। नवरं-भद्दनंदी कुमारे सिरिदेवीपामोक्खाणं पंचसया, सामी समोसरणं सावगधम्मं पुव्वभवपुच्छा— महाविदेहे वासे पुंडरीकिणी नगरी विजयते कुमारे, जुगबाहू तित्थयरे पडिलाभिए माणुस्साउए निबद्धे इहं उप्पन्ने सेसं जहा सुबाहुस्स जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिति बुज्झिहिति मुच्चिहिति परिनिव्वाहिति, सव्वदुक्खाणमंतं करेहिति॥२॥

भावार्थ— अब दूसरे अध्ययन का अर्थ कहते हैं—

हे जम्बू! उस काल में उस समय में ऋषभपुर नामक नगर था। उसमें स्तूपकरंड उद्यान था। वहां धन्य नामक यक्ष था। धनावह नामक राजा था। सरस्वती रानी थी। स्वप्न का देखना स्वप्न का राजा से कहना, पुत्र का जन्म होना, बाल्यावस्था, ७२ कलाओं का अध्ययन करना, यौवन अवस्था का वर्णन, पांच सौ स्त्रियों से पाणिग्रहण, दहेज महल गहना आदि का देना, भोग भोगना आदि सुबाहुकुमार के समान जानना चाहिए। विशेष यह है कि नाम भद्रनन्दिकुमार था। उसके श्रीदेवी वगैरह पांच सौ स्त्रियां थीं। भगवान् महावीर समवशरण सहित पधारे। उनके समीप उसने श्रावक धर्म स्वीकार किया। गौतम स्वामी ने भद्रनन्दिकुमार के पूर्वभव पूछे। भगवान् महावीर ने कहा— महाविदेह क्षेत्र में पुंडरीकिणी नगरी थी। विजयकुमार नाम था। युगबाहु तीर्थंकर से प्रतिबोधित होकर, मनुष्य आयु बांधा था। फिर यहां (ऋषभपुर नगर में) उत्पन्न हुआ।

शेष सब कथा सुबाहुकुमार समान जानना। (यावत्) महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध होगा, बुद्ध होगा, मुक्त होगा, निर्वाण प्राप्त करेगा और सर्व दुखों का अन्त करेगा ॥२॥

दूसरा अध्ययन समाप्त हुआ ॥



तृतीय अध्ययन.

मूलम्— तच्चस्स उक्खेवो—

वीरपुर णगरं, मणोरमं उज्जाणं, वीरकण्हो जक्खो मित्ते राया, सिरी देवी, सुजाए कुमारे, बलसिरीपामोक्खा पंचसयकन्ना, सामी समोसरणं, पुव्वभवपुच्छा—उसुयारे नयरे उसभदत्ते गाहावई पुप्फदत्ते अणगारे पडिलाभिए मणुस्साउसे निबद्धे। इह उप्पन्ने जाव महाविदेहवासे सिज्झिहिति ॥३॥

भावार्थ— वीरपुर नगर मे मनोरम नाम का उद्यान था। उस मे वीरकृष्ण नाम के यक्ष देवता का यक्षायतन था। नगर का मित्र नाम का राजा था। और श्री नामकी रानी थी। उनका सुजात नामका कुमार था। उसके बलश्री प्रमुख पाचसौ स्त्रिया थीं। वहा भगवान् महावीर स्वामीका समवसरण आया। गौतम स्वामी ने सुजातकुमारके पूर्वभव पूछे। भगवान महावीरने कहा- इपुकार नगरमे ऋषभदत्त गाथापतिने पुष्पदत्त अनगार को दान दिया था। वहा मनुष्य आयु का बध करके यहा उत्पन्न हुआ है। (यावत्) महाविदेह क्षेत्र से सिद्ध होगा ॥३॥

॥ तीसरा अध्ययन समाप्त हुआ ॥

चतुर्थ अध्ययन।

मूलम्— चउत्थस्स उक्खेवो—

विजयपुरं णगरं, णंदणवणं उज्जाणं, असोगो जक्खो,

वासवदत्ते राया, कण्हा देवी सुवासवे कुमारे भद्दापामोक्खाणं पंच सया जाव पुव्वभवे कोसंबी णगरी धणपाले राया, वेसमणभद्दे अणगारे पडिलाभिए इह जाव सिद्धे ॥४॥

चउत्थं अज्झयणं ॥

भावार्थ—विजयनगर मे नन्दनवन उद्यान था। उसमें अशोक नामके यक्ष का यक्षायतन था। नगर का राजा वासवदत्त और रानी कृष्णा थी। कुमार का नाम वासव कुमार था। भद्रा प्रभृति पाच सौ स्त्रिया थी। (यावत्) वह कुमार पूर्व भव मे कोशाम्बी नगरी का धनपाल नामक राजा था। वश्रमणभद्र मुनि को दान दिया था। यहां (यावत) उत्पन्न हुआ और सिद्ध होगा ॥४॥

वासवकुमार का वर्णन करने वाला

चौथा अध्ययन समाप्त हुआ



पंचम-अध्ययन

मूलम्—पंचमस्स उक्खेवो—सोगंधिया णगरी, नीलासोए उज्जाणे सुकालो जक्खो, अप्पडिहओ राया, सुकन्ना देवी महचंदे कुमारे, तस्स अरहदत्त भारिया, जिणदासो पुत्तो, तित्थरागमणं, जिणदासपुव्वभवो, मज्झमिया णगरी, मेहरहो राया, सुधम्मे अणगारे पडिलाभिए, जाव सिद्धे ॥५॥

पंचम अज्झयणं समत्तं



भावार्थ—सौगन्धिका नगरी मे नीलाशोक उद्यान था। उसमे सुकाल नामके यक्ष का यक्षायतन था। राजा अप्रतिहत और रानी सुकन्या थी। महचद

कुमार था। उसकी अरहदत्ता स्त्री और जिनदास पुत्र था। तीर्थंकर आये। गणधर भगवान् ने जिनदास के पूर्वभव पूछे। भगवान ने कहा—माध्यमिका नगरी में सुधर्म राजा ने मेघरथ अनगार को दान दिया [यावत्] सिद्ध होगा ॥ ५ ॥

पांचवा अध्ययन समाप्त।

छठा अध्ययन।

मूलम्—छट्टस्स उक्खेवो—कणगपुरं णगरं सेयासोयं उज्जाणं वीरभद्दो जक्खो, पियचंदो राया, सुभद्दा देवी, वेसमणे कुमारे जुवराया, सिरीदेवीपामोक्खा पंचसयकन्ना, पाणिग्गहणं तित्थयरागमणं, धनवती जुवरायपुत्ते, जाव पुव्वभवो-मणिवया नगरी, मित्तो राया, संभूतिविजए अणगारे पडिलाभिते. जाव सिद्धे ॥ ६ ॥

छट्ठं अज्झयणं समत्तं।

भावार्थ—कनकपुर नगरमे श्वेताशोक उद्यान था। जिसमे वीरभद्र नामके यक्षका यक्षायतन था। नगरका राजा प्रियचन्द्र और रानी सुभद्रा थी। युवराज वैश्रमणकुमार था। श्रीदेवी प्रभृति पांचसो कन्याए उसे परिणाई गई। तीर्थंकर भगवान आये। उन्होंने धनपति युवराजके पुत्रके पूर्वभव बताए कि-[यावत्]मणिपदा नगरी मे मित्र नामक राजा था। संभूतिविजय अनगारको दान देकर यहा उत्पन्न हुआ और [यावत्] सिद्ध होगा ॥ ६ ॥

छठवा अध्ययन समाप्त हुआ।

सप्तम- अध्ययन।

मूलम्—सत्तमस्स उक्खेवो- महापुरं णगरं, रत्तासोगं उज्जाण, रत्तपाओ जक्खो, बले राया, सुभद्दा देवी महब्बले

कुमारे रत्तवईपामोक्खाओ पंचसयकन्नाओ, पाणिग्गहणं, जाव पुव्वभवो — णागदत्ते गाहावती, इंदपुरे अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे ॥ ७ ॥

॥ सत्तमं अज्झयणं समत्तं ॥

भावार्थ— महापुर नगर में रक्ताशोक उद्यान था। उसमें रक्तपाद नामके यक्ष का यक्षायतन था। राजा का नाम बल था। रानी सुभद्रादेवी थी। महाबल कुमार था। रक्तवती प्रमुख पांच सौ कन्याओंके साथ पाणिग्रहण हुआ। तीर्थंकर भगवान् आए। पूर्वभव बताए— मणिपुर नगर में नागदत्त गाथापति ने इन्द्रपुर अनगारको दान दिया। (यावत्) वह सिद्ध होगा॥७॥

सातवाँ अध्ययन समाप्त हुआ ॥

अष्टम- अध्ययन।

मूलम्— अट्ठमस्स उक्खेवो—

सुघोसं णगरं, देवरमणं उज्जाणं, वीरसेणो जक्खो, अज्जुणो राया, तत्तवती देवी, भद्दनंदी कुमारे सिरीदेवी पामोक्खा पंचसया जाव पुव्वभवे पुच्छा-महाघोसे अणगारे धम्मघोसे गाहावती धम्मसीहे अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे ॥८॥

अट्ठमं अज्झयणं समत्तं।

भावार्थ— सुघोष नगर में देवरमण उद्यान था। उसमें वीरसेन नामके यक्ष का यक्षायतन था। राजा अर्जुन था। रानी तत्त्ववती थी। भद्रनंदी कुमार था। श्रीदेवी प्रमुख पांच सौ कन्याएं परिणाई गई। पूर्व भव इस प्रकार है—महाघोष नगर में धर्मघोष सेठ ने धर्मसिंह अनगार को दान देकर, यहां जन्म लिया है, (यावत्) सिद्ध होगा ॥८॥

आठवां अध्ययन समाप्त हुआ।

नववाँ अध्ययन ।

मूलम्— नवमस्स उक्खेवो—

चंपा नगरी, पुन्नभद्दे उज्जाणे, पुन्नभद्दो जक्खो, दत्ते राया, रत्तवई देवी, महचदे कुमारे जुवराया, सिरिकंतापामोक्खाणं पंचसया कन्ना, जाव पुव्वभवो तिगिच्छी णगरी जियसत्तू राया, धम्मवीरिए अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे ॥९॥

नवमं अज्झयणं समत्तं



भावार्थ— चम्पा नगरी मे पूर्णभद्र उद्यान मे पूर्णभद्र नामके यक्ष का यक्षायतन था । राजा का नाम दत्त और रानी का नाम रक्तवती था । युवराज कुमार महचन्द्र था । श्रीकान्ता वगैरह पाच सौ कन्याओंसे विवाह हुआ । पूर्व भव— तिगिच्छी नगरीमे जितशत्रु राजाको धर्मवीर अनगार को दान दिया था । वह यहा उत्पन्न हुआ, (यावत्) सिद्ध होगा ॥९॥

नववा अध्ययन समाप्त हुआ ।

दशवाँ अध्ययन

मूलम्— जति णं भंते! दसमस्स उक्खेवो—

एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं साएयं णामं णगरं होत्था। उत्तरकुरुज्जाणे पासमिओ जक्खो मित्तनंदी राया सिरिकंता देवी, वरदत्ते कुमारे वीरसेणा(वरसेणा) पामोक्खाणं पंचदेवीसया, तित्थयरागमणं, सावगधम्मं, पुव्वभवपुच्छा सतदुवारे नगरे विमलवाहणे राया धम्मरुचिनामं अणगारं एज्जमाणं पासति । पासित्ता पडिलाभिते समाणे संसार परित्तीकये मणुस्साउए निबद्धे, इहं उप्पन्ने, सेसं

जहा सुबाहुस्स कुमारस्स पोसहचिंता जाव पव्वजा, कप्पंतरिओ जाव सव्वट्ठसिद्धे। ततो महाविदेहे, जहा दढपइन्नो जाव सिज्झिहिति बुज्झिहिति मुचिहिति परिनिव्वाहिति सव्वदुक्खाणमंतं करेहिति। एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं दसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते। सेवं भंते! सेवं भंते! सुहविवागा ॥ १० ॥

दसमं अज्झयणं समत्तं।

भावार्थ— हे भगवन्! दशवें अध्ययन का वर्णन कैसा है? हे जम्बू! उस काल में उस समय साकेत नामक नगर था। उस में उत्तरकुरु उद्यान था। पासमिक नामके यक्ष का यक्षायतन था। मित्रनन्दी राजा था। श्रीकान्ता रानी थी। वरदत्त कुमार था। उसके वीरसेना(या वरसेना)प्रमुख पांच सौ रानियां थीं। वहां तीर्थङ्कर पधारे। वरदत्त ने श्रावकधर्म स्वीकार किया। गणधर महाराज ने उसके पूर्वभव पूछे। भगवान् ने बताया—शतद्वार नगर में विमलवाहन राजा ने धर्मरुचि नामक अनगार को आता देखा। देखकर, विधिपूर्वक दान देकर संसार को हलका किया। मनुष्य आयु बांधकर यहां उत्पन्न हुआ है। शेष सब सुबाहुकुमारकी तरह जानना चाहिए— पौषधमें आध्यात्मिक विचार पैदा हुआ(यावत्) और दीक्षित हो गया। अनुक्रम से कल्पों में (यावत्) और सर्वार्थसिद्धि में देव होगा। पश्चात् महाविदेह क्षेत्रमें दृढ प्रतिज्ञ की नाईं (यावत्) सिद्ध बुद्ध मुक्त और परिनिर्वृत होगा तथा सब दुखों का अन्त करेगा।

हे जम्बू! इस प्रकार श्रमण भगवान् महावीर ने (यावत्) मोक्ष को प्राप्त होते हुए सुख विपाक के दसवें अध्ययन में यह अर्थ प्ररूपण किया है। जम्बू स्वामी बोले—

हे भगवन् ! ऐसा ही है, ऐसा ही है!!

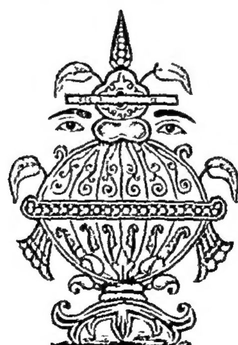
दसवां अध्ययन समाप्त हुआ

मूलम्—नमो सुयदेवयाए। विवागसुयस्स दो सुयक्खंधा–दुहविवागो य सुहविवागो य। तत्थ दुहविवागे दस अज्झयणा एकासरगा। दससु चेव दिवसेसु उद्दिसिज्जंति। एवं सुहविवागो वि। सेसं जहा आयारस्स ॥

इइ सुहविवागसुत्तं समत्तं।

भावार्थ—श्रुत देवता के लिए नमस्कार हो। विपाक सूत्र के दो श्रुतस्कन्ध है—एक दुखविपाक और दूसरा सुखविपाक। उनमें से दुखविपाक में दश अध्ययन है और वे एक सरीखे है। इनका उपदेश दश दिनों में ही दिया जाता है। इसी प्रकार सुखविपाक भी जानना चाहिए। शेष सब आचाराङ्ग की तरह जानना चाहिए।

॥ इस प्रकार सुखविपाक सूत्र समाप्त हुआ ॥



इसे असज्झाय टालकर सज्झाय से पढे

शुद्धि--पत्र.



पृ	पं	अशुद्ध	शुद्ध
५	२४	तावज्ञान	तत्त्वज्ञान
६	८	सुबाहु	सुबाहु
११	५	वहा	वह
१३	१०	सपंडिय०	सपिडिय०
१७	२३	त्त	वृत्त
१९	३	सुभिक्ख	सुभिक्ख
२०	३	खजाने	यन्त्र खजाने
२०	२१	० ल्लियहिय०	०ल्लिहिय०
२१	३	पञ्चन्भवमागी	पच्चणुन्भवमाणी
२६	५	उत्ती	उसी
३४	२५	केडे	कड़े
४७	५	० गधम्मल्लाल०	० गधमल्लालं०
४७	२२	प चात	पश्चात्
४८	१६	चम्मक	चम्पक
६५	६	गाभे	गाभे
६५	२०	निस्वलेवे	निरुवलेवे
६६	२३	भगवान का पद्म	भगवान का मुँह पद्म
६८	१४	उठी हुई	उठे हुए
७८	१३	ओर	ओर
७६	१२	वला	वाला
८६	७	विहरा	विहार
६४	१६	वास आदिके पत्तेकी	वास की
११०	१	याकत्	यावत्
१२०	१२	नहारूवाण। थेराण	नहारूवाण थेराणं
१२६	१५	वन्य नामक यत्त था	धन्य नामक यत्त का यत्तायतन था